संत श्री आशारामजी आश्रम द्वारा प्रकाशित

ऋषि प्रसाद

हिन्दी

मूल्य : रु. ६/-
१ दिसम्बर २०११
वर्ष : २१ अंक : ६
(निरंतर अंक : २२८)

पूज्य संत श्री आशारामजी बापू

कैसी है ईश्वर की यह सुंदर व्यवस्था !

देश भर में दरिद्रनारायणों में गर्म भोजन के डिब्बों व जीवनोपयोगी सामग्री का वितरण

बलिया (उ.प्र.)

कराड (महा.)

धगडमाल, जि.वलसाड (गुज.)

ओझर मिग, जि. नासिक (महा.)

सीतामढ़ी (बिहार)

आलंदी, पुणे (महा.)

राँची (झारखण्ड)

इस्लामपुर, जि. सांगली (महा.)

ऋषि प्रसाद

मासिक पत्रिका

हिन्दी, गुजराती, मराठी, ओड़िया, तेलुगू, कन्नड़, अंग्रेजी, सिंधी, सिंधी (देवनागरी) व बंगाली भाषाओं में प्रकाशित

वर्ष : २१ अंक : ०६
भाषा : हिन्दी (निरंतर अंक : २२८)
१ दिसम्बर २०११ मूल्य : रु. ६-००
मार्गशीर्ष-पौष वि.सं. २०६८

स्वामी : संत श्री आशारामजी आश्रम
प्रकाशक और मुद्रक : श्री कौशिकभाई पो. वाणी
प्रकाशन स्थल : संत श्री आशारामजी आश्रम, मोटेरा, संत श्री आशारामजी बापू आश्रम मार्ग, साबरमती, अहमदाबाद - ३८०००५ (गुजरात).
मुद्रण स्थल : विनय प्रिंटिंग प्रेस, ''सुदर्शन'', मिठाखली अंडरब्रिज के पास, नवरंगपुरा, अहमदाबाद - ३८०००९ (गुजरात).
सम्पादक : श्री कौशिकभाई पो. वाणी
सहसम्पादक : डॉ. प्रे. खो. मकवाणा, श्रीनिवास

सदस्यता शुल्क (डाक खर्च सहित)

भारत में

अवधि	हिन्दी व अन्य भाषाएँ	अंग्रेजी भाषा
वार्षिक	रु. ६०/-	रु. ७०/-
द्विवार्षिक	रु. १००/-	रु. १३५/-
पंचवार्षिक	रु. २२५/-	रु. ३२५/-
आजीवन	रु. ५००/-	----

विदेशों में (सभी भाषाएँ)

अवधि	सार्क देश	अन्य देश
वार्षिक	रु. ३००/-	US $ 20
द्विवार्षिक	रु. ६००/-	US $ 40
पंचवार्षिक	रु. १५००/-	US $ 80

कृपया अपना सदस्यता शुल्क या अन्य किसी भी प्रकार की नकद राशि रजिस्टर्ड या साधारण डाक द्वारा न भेजा करें। इस माध्यम से कोई भी राशि गुम होने पर आश्रम की जिम्मेदारी नहीं रहेगी। अपनी राशि मनीऑर्डर या डिमांड ड्राफ्ट ('ऋषि प्रसाद' के नाम अहमदाबाद में देय) द्वारा ही भेजने की कृपा करें।

सम्पर्क पता : 'ऋषि प्रसाद', संत श्री आशारामजी आश्रम, संत श्री आशारामजी बापू आश्रम मार्ग, साबरमती, अहमदाबाद-३८०००५ (गुज.).
फोन : (०७९) २७५०५०१०-११, ३९८७७७८८.
e-mail : ashramindia@ashram.org
web-site : www.ashram.org
: www.rishiprasad.org

इस अंक में...

विभिन्न टी.वी. चैनलों पर पूज्य बापूजी का सत्संग

रोज प्रातः ३, ५-३०, ७-३० बजे, रात्रि १० बजे तथा दोपहर २-४० (केवल मंगल, गुरु, शनि)

रोज सुबह ९-४० बजे

संस्कार
रोज दोपहर २-०० बजे

care WORLD
रोज सुबह ७-०० बजे

सत्संग टी.वी.
रोज रात्रि १०-०० बजे

रोज सुबह ८-४० बजे

आश्रम इंटरनेट टी.वी. २४ घंटे प्रसारण

सजीव प्रसारण के समय नित्य के कार्यक्रम प्रसारित नहीं होते।

✻ A2Z चैनल 'डिश टी.वी.' (चैनल नं. ५७९) तथा रिलायंस के 'बिग टी.वी.' (चैनल नं. ४२५) पर भी उपलब्ध है।
✻ संस्कार चैनल 'डिश टी.वी.' (चैनल नं. १११३) तथा रिलायंस के 'बिग टी.वी.' (चैनल नं. ६५१) पर भी उपलब्ध है।
✻ इंटरनेट पर www.ashram.org/live लिंक पर आश्रम इंटरनेट टी.वी. उपलब्ध है।

भगवान के वास्तविक स्वरूप को जानो

(आत्मनिष्ठ बापूजी के मुखारविंद से निःसृत ज्ञानगंगा)

भगवान कहते हैं :

मय्यासक्तमनाः पार्थ योगं युंजन्मदाश्रयः ।
असंशयं समग्रं मां यथा ज्ञास्यसि तच्छृणु ॥

'हे पार्थ ! अनन्य प्रेम से मुझमें आसक्तचित्त तथा अनन्यभाव से मेरे परायण होकर योग में लगा हुआ तू जिस प्रकार से सम्पूर्ण विभूति, बल, ऐश्वर्य आदि गुणों से युक्त, सबके आत्मरूप मुझको संशयरहित जानेगा, उसको सुन ।' **(गीता : ७.१)**

अब यहाँ ध्यान देने जैसी बात है कि भगवान बोलते हैं, 'मुझमें...' । अगर भगवान का 'मैं' हमने ठीक से न समझा और हमारे में आसक्ति का जोर है तो हम भगवान के किसी रूप को भगवान समझेंगे तथा हमारे चित्त में द्वेष है तो कहेंगे कि भगवान कितने अहंकारी हैं, कहते हैं कि मेरे में ही आसक्त हो ।

श्रीकृष्ण का 'मैं' जब तक समझ में नहीं आता अथवा श्रीकृष्ण के 'मैं' की तरफ जब तक नजर नहीं जाती, तब तक श्रीकृष्ण के उपदेश को अथवा श्रीकृष्ण के इस अद्भुत इशारे को हम समझ नहीं सकते। **मय्यासक्तमनाः पार्थ...** मुझमें आसक्त... मेरे में जिसकी प्रीति है। हमारे में राग है तो श्रीकृष्ण के साकार रूप में ही प्रीति होगी और हमारे में द्वेष है तो कहेंगे श्रीकृष्ण बोलते हैं, 'मेरे में ही प्रीति...' यह तो एकदेशीयता हुई । सच पूछो तो श्रीकृष्ण का जो 'मैं' है, वह एकदेशीयता को तोड़कर व्यापकता की खबरें सुनानेवाला है ।

श्रीकृष्ण ने 'गीता' कही नहीं, श्रीकृष्ण के द्वारा 'गीता' गूँज गयी । हम कुछ करते हैं तो या तो अनुकूल करते हैं या प्रतिकूल करते हैं । करनेवाले परिच्छिन्न जीव रहते हैं । श्रीकृष्ण ऐसे व्यक्ति नहीं हैं जो परिच्छिन्नता को मौजूद रखकर कुछ कहें । श्रीकृष्ण का तो इतना खुला जीवन है, इतनी सहजता है, स्वाभाविकता है कि वे ही कह सकते हैं कि मेरे में आसक्त हो । आसक्ति शब्द, प्रीति शब्द... शब्द तो बेचारे नन्हे पड़ जाते हैं, अर्थ हमें लगाना पड़ता है । जो हमारी बोलचाल की भाषा है वही श्रीकृष्ण बोलेंगे, वही गुरु बोलेंगे ।

भाषा तो बेचारी अधूरी है, अर्थ भी उसमें हमारी बुद्धि के अनुसार लगता है लेकिन हमारी बुद्धि जब हमारे व्यक्तित्व का, हमारी देह के दायरे का आकर्षण छोड़ दे तो फिर कुछ हम समझने के काबिल हो पाते हैं और समझने के काबिल होते-होते यह समझा जाता है कि हम जो कुछ समझते हैं वह कुछ नहीं । आज तक जो हमने समझा है, जाना है, वह कुछ नहीं । जिसको जानने से सब जाना जाता है वह हमने नहीं जाना, जिसको पाने से सब पाया जाता है उसको नहीं पाया, जिसको समझने से सब समझा जाता है उसको नहीं समझा । तो बुद्धि में यदि अकड़ है तो तुच्छ-तुच्छ जानकारियाँ एकत्रित करके हम अपने को विद्वान या ज्ञानी या जानकार मान लेते हैं । अगर बुद्धि में परमात्मा के प्रति प्रेम है, आकांक्षाएँ नहीं हैं तो फिर हमने जो कुछ जाना है उसकी कीमत हमको नहीं दिखती, जिससे जाना जाला है उसको समझने की हमारे पास क्षमता आती है ।

भगवान बोलते हैं : **मय्यासक्तमनाः पार्थ...**

अर्थात् मेरे में जिसकी प्रीति है... उपवास में, पानी पीने में, न पीने में, खाने में अथवा न खाने में, मिठाई में अथवा तीखे में - यह खण्ड-खण्ड में प्रीति नहीं, मुझ अखण्ड में जिसकी प्रीति हुई है ऐसे अर्जुन ! मैं तेरे को अपना समग्र स्वरूप सुनाता हूँ। और जिसने भगवान के समग्र स्वरूप को जान लिया, उसको और कुछ जानना बाकी नहीं बचता। जिसने उस एक को, समग्र स्वरूप को न जाना और बाकी सब कुछ जाना, हजार-हजार, लाख-लाख जाना तो उसका लाख-लाख जानना सब बेकार हो जाता है।

जिसने एक को जान लिया उसने और किसीको नहीं जाना तो भी चल जाता है। रामकृष्ण परमहंस ने एक को जाना, बाकी का न जाना तो भी काम चल गया। हिटलर ने बाकी बहुत कुछ जाना, एक को नहीं जाना तो मरा मुसीबत में। विश्वामित्रजी ने एक को जाना तो भगवान राम और लक्ष्मण पैरचम्पी कर रहे हैं। रावण ने एक को नहीं जानकर बहुत-बहुत जाना तो हर बारह महीने में दे दियासलाई !

अनंत-अनंत ब्रह्माण्डों में जो फैल रहा है वही तुम्हारे हृदय में बस रहा है लेकिन हमारी संसार की जो आसक्तियाँ हैं, मान्यताएँ हैं उनको छोड़ने की युक्ति हमको नहीं है।

श्वास छोड़ते समय भावना करें कि 'मेरी इच्छाएँ, अहंकार, वासना अलविदा... अब तो सर्वत्र मेरा परमात्मा है, मेरा आत्मा ही रह गया है। इच्छाएँ-वासनाएँ चली गयीं तो ईश्वर ही तो रह गया ! मैं ईश्वर में डूब रहा हूँ, मेरा आत्मा ही परमात्मा है। ॐ आनंद आनंद...' इस प्रकार का भाव करके जो ध्यान करता है, चुप होता है वह भगवान में प्रीतिवाला हो जाता है। रस आने लगेगा तो मन उस तरफ लगेगा। मन को रस चाहिए। इस ढंग से यदि तुम मन को रस लेना सिखा दो तो भगवान में प्रीति हो जायेगी और भगवान का समग्र स्वरूप संत जब बतायेंगे और भगवान के वाक्य जब तुम सुनोगे तो समग्र स्वरूप का साक्षात्कार हो जायेगा।

जितना हेत हराम से, उतना हरि से होय।
कह कबीर ता दास का, पला न पकड़े कोय॥

फिर यमदूत की क्या ताकत है कि तुम्हें मार सके, मौत की क्या ताकत है कि तुम्हें आँख दिखा सके ! वह तो तुम्हारे शरीर से गुजरेगी लेकिन तुम उसके साक्षी होकर अपने स्वरूप में जगमगाते रहोगे।

भगवान बोलते हैं : **मय्यासक्तमनाः पार्थ योगं युंजन्मदाश्रयः।** जो मेरे में... 'मेरे में' माना रथ पर बैठे हुए श्रीकृष्ण अपने को उस रूप में 'मैं' नहीं कह रहे थे। श्रीकृष्ण का 'मैं' तो समग्र ब्रह्माण्ड में फैला हुआ है, सबके दिलों में फैला हुआ है। हे पार्थ ! अनन्य प्रेम से मुझमें आसक्तचित्त तथा अनन्य भाव से मेरे परायण होकर योग में लगा हुआ तू जिस प्रकार से सम्पूर्ण विभूति, सम्पूर्ण बल, सम्पूर्ण ऐश्वर्य आदि जिसकी सत्ता से चमक रहा है, जिसका है उसको जान ले तो तेरा बेड़ा पार हो जायेगा।

यह कठिन नहीं है, बड़ा आसान है। इसको जानने अथवा परमात्मा को पाने जैसा दुनिया में और कोई सरल कार्य नहीं लेकिन मनुष्य इतना छोटी बुद्धि का हो गया कि थोड़ी-थोड़ी चीजों में उलझ जाता है। ईंट, चूना, लोहा, लक्कड़ के मकान में जिंदगी खो देगा, मिटनेवाले मित्रों में समय खो देगा, जलनेवाले शरीर में समय खो देगा इसलिए ज्ञान दुर्लभ हो जाता है, वरना यह दुर्लभ नहीं।

तुम्हें कोई सम्राट दिखता है, कोई शहंशाह दिखता है, कोई धनवान दिखता है तो उसके धन को और शहंशाही को अपने से पृथक् नहीं मानकर उस धन और शहंशाही की इच्छाओं और वासनाओं

को बढ़ाकर नहीं लेकिन उस धन और शाहाना नजर को अपनी नजर समझकर तुम मजा लूटो। किसीका धन देख के, किसीका सौंदर्य देख के, किसीकी सत्ता देख के तुम वैसा बनने की कोशिश करोगे तो बनते-बनते युग बीत जायेंगे, वह रहेगा नहीं लेकिन जो धनवान है, सत्तावान है, ऐश्वर्यवान है उसमें भी मैं ही उस रूप में मजा ले रहा हूँ - ऐसा सोचोगे तो बेड़ा जल्दी पार हो जायेगा।

समग्र ऐश्वर्य, समग्र सत्ता, समग्र रूप सच पूछो तो उस तुम्हारे चैतन्य के ही हैं। जैसे रात्रि के स्वप्न में तुम देखते हो कि कोई कनाडा का प्रधानमंत्री है, कोई भारत का राष्ट्रपति है लेकिन ये सब स्वप्न में तुम्हारे बनाये हुए हैं। तुम्हींने सत्ता दी है उनको। स्वप्न में तो तुम्हारी चैतन्य सत्ता ने स्वप्न-समष्टि को सत्ता दी, ऐसे ही जाग्रत में तुम तो लगते हो व्यष्टि... 'मैं एक छोटा व्यक्ति और ये बड़े-बड़े।' तुम अपने वास्तविक स्वरूप को नहीं जानते हो तब तुम छोटे दिखते हो और वे बड़े-बड़े दिखते हैं। तुम अपने को जानो तो तुमको पता चलेगा कि ये सब मेरे बनाये हुए पुतले हैं। **संसार तजल्ली[1] है मेरी... अंदर-बाहर मैं ही हूँ। सब मुझीसे सत्ता पाते हैं... हर हर ॐ हर हर ॐ...**

ऐसा अनुभव करने के लिए भगवान में प्रीति हो जाय, भगवान में अनन्य भाव हो जाय। मूर्तियाँ अन्य-अन्य, रूप अन्य-अन्य, रंग अन्य-अन्य, भाव अन्य-अन्य, विचार अन्य-अन्य, निर्णय अन्य-अन्य... उन सबको देखनेवाला एक अनन्य आत्मा मैं ही तो हूँ। जैसे तुम्हारे शरीर में अन्य-अन्य को देखनेवाले तुम अनन्य हो, अन्य नहीं हो ऐसे ही सबकी देहों में भी तुम्हीं हो। इस प्रकार का यदि तुम्हें अनुभव होने लगे, अरे महाराज ! फिर तो तुम्हारी जिस पर नजर पड़े न, वह भी निहाल हो जाय, वह भी खुशहाल हो जाय। ❑

१. प्रकाश, प्रताप

प्रसंग माधुरी

अपने भक्त के कारण राम तजउ निज रूप

(पूज्य बापूजी की मधुमय अमृतवाणी)

मैं तो उन लोगों को धनभागी मानता हूँ जो भगवान के भक्त की सेवा करते हैं, संत का सत्संग सुनते हैं। महाराष्ट्र में परली बैजनाथ है। वहाँ एक भक्त रहते थे, जिनका नाम था जगन्मित्र। गाँववालों ने उन्हें थोडी जमीन दी थी। उसीमें वे अपना छोटा-सा मकान बनाकर रहते और भगवान का भजन करते थे।

एक बदमाश दरोगा (थानेदार) संत-स्वभाव जगन्मित्र के परिवार को सताता था। दरोगा ने देखा कि 'यह मेरे रास्ते का काँटा है। मेरी बेटी की शादी होनेवाली है। बाराती आयेंगे और यह छोटे-से झोंपड़ेवाला... मैं इसका झोंपड़ा नीलाम करा दूँगा। मैं इसको बरबाद कर दूँगा।'

गाँववालों ने कहा : ''दरोगा साहब ! हम आपको हाथ जोड़ते हैं। यह भगवान का भक्त है। आप इसे न सतायें तो अच्छा है।''

दरोगा बोला : ''अरे, भगवान का भक्त है तो हम भी देवी के भक्त हैं ! हम नास्तिक नहीं हैं। अगर यह सच्चा भक्त है तो देवी के शेर को बुलाकर दिखाये। शेर इसको काटे नहीं, मारे नहीं तो मैं मानूँगा। नहीं तो मैं इसका यह झोंपड़ा हटवा दूँगा, नीलाम करा दूँगा।''

जगन्मित्र को लोगों ने बताया : ''यह पुलिस

के बल से, सरकारी नौकरी के बल से आपको तबाह करना चाहता है। इसके पास आधिभौतिक बल है।''

जगन्मित्र ने कहा : ''इसका आधिभौतिक बल इसके पास रहे। मेरे पास आधिदैविक बल है, अध्यात्म-बल है, भगवान की कृपा है। यह मुझे कुचल डाले, कारागार में भेजे, मेरा झोंपड़ा नीलाम करा दे इसके पहले मैं जाता हूँ और मेरे ठाकुरजी को बुला लाता हूँ।''

जगन्मित्र जंगल में गये और कातर भाव से पुकारने लगे : 'भक्त की लाज रखने के लिए तू नरसिंह अवतार भी ले सकता है। निराकार साकार भी हो सकता है। प्रभु ! प्रभु !! प्रभु !!!'

दहाड़ता हुआ एक शेर प्रकट हुआ। कहाँ से प्रकट हुआ कोई सोच नहीं सकता। शेर जगन्मित्र के पास आया। जगन्मित्र ने कहा : ''प्रभु ! शेर के रूप में पधारे हो।'' अपना दुपट्टा शेर के गले में बाँध दिया और कहा : ''प्रभु ! चलो मेरे साथ।'' जैसे पाली हुई बकरी को कोई खींचकर ले आये, ऐसे ही जगन्मित्र शेर को खींच के ला रहे हैं।

उस समय गाँव के चारों ओर दीवार (पक्का परकोटा) होती थी और एक मुख्य द्वार होता था। संध्या का समय था। शेर को देखकर द्वारपाल घबराया और दरवाजा बंद कर दिया। वैसे तो दरवाजा रात्रि को ९ बजे बंद होता था लेकिन आज संध्या को साढ़े सात बजे ही दरवाजा बंद कर दिया।

जगन्मित्र ने कहा : ''प्रभुजी ! दरवाजा तो बंद कर दिया है। उस दरोगा से कैसे मिलोगे आप ?'' प्रभुजी ने दहाड़ मारी, दरवाजा गिर पड़ा। जगन्मित्र और शेर नगर में प्रविष्ट हुए।

लोगों ने आश्चर्य से कहा : ''अरे ! शेर और जगन्मित्र के हाथ में पाली हुई बकरी जैसा ! अरे शेर, शेर... शेर आया, शेर आया !'' लोग घरों में छुप गये और छतों से देखने लगे कि भक्त जगन्मित्र शेर को ले जा रहे हैं। वे दरोगा के घर के पास पहुँचे। दरोगा ने देखा कि 'यह तो शेर को ऐसे ला रहा है ! अब मैं क्या मुँह दिखाऊँ ?' अंदर कमरे में छुप गया। उसके बाल-बच्चे भी छुप गये। दरवाजा बंद कर लिया।

जगन्मित्र बोले : ''प्रभुजी ! इसने तो आपका दर्शन ही नहीं किया।''

शेररूपी प्रभुजी ने पंजा मारा तो दरवाजा टूट गया। अब तो जगन्मित्र शेर को अंदर ले गये। बोले : ''दरोगा साहब ! तुम बोलते थे शेर दिखा दे। यह देख लो।''

दरोगा फूट-फूटकर रोने लगा और चरणों पर गिर पड़ा। बोला : ''महाराज ! मैंने आधिदैविक शक्ति और आध्यात्मिक शक्ति का अपमान किया है। मुझे पता नहीं था कि आप जैसे भक्त को सताने से भगवान नाराज होते हैं। महाराज ! मुझे माफ कर दो।''

जगन्मित्र ने शेर के गले का प्रेम-बंधन खोला और शेर अदृश्य हो गया।

संत सताये तीनों जायें, तेज बल और वंश।
ऐसे ऐसे कई गये, रावण कौरव और कंस ॥

संत को सताने से तबाही होती है तो उनका दर्शन, सत्संग, सेवा आबादी भी तो देते हैं, बेड़ा पार भी तो करते हैं। मैंने मेरे संतों को रिझाया तो मेरा बेड़ा पार हुआ। जिन्होंने भी संतों का दर्शन किया, संतों को रिझाया उन्हें आधिदैविक शांति मिली, आध्यात्मिक शांति मिली, आत्मशांति मिली। आधिभौतिक जगत भी उनके लिए सुखदायी हुआ। जो आध्यात्मिकता का तिरस्कार करके आधिभौतिक जगत में प्रगति करना चाहते हैं, आधिभौतिक जगत उनको दबोच देता है, दुःखी करता है। हृदयाघात करा के, कुचल-कुचल के मार देता है लेकिन जो आधिदैविक शक्ति, आध्यात्मिक शक्ति का आश्रय लेते हैं, उनके लिए आधिभौतिक जगत सुखरूप हो जाता है। ❑

बुद्धि से परे है ईश्वर की सुंदर व्यवस्था

(आत्ममाधुर्य से ओतप्रोत बापूजी की अमृतवाणी)

एक तपस्वी ने १२ साल भजन किया। देखा, कुछ हुआ नहीं, भगवान तो नहीं आये कोई ऋद्धि-सिद्धि भी नहीं आयी, लोक में इतनी पूजा-प्रतिष्ठा भी नहीं। ले तेरी कंठी, धर तेरी माला ! बाबा-वाबाओं का संग, एकांतवास, यह-वह सब छोड़ो। बोलते हैं कि एकांत में भजन करते हैं तो बड़ा फायदा होता है, बड़ी शक्तियों का संचार होता है। नेपोलियन जैसा व्यक्ति भी बोलता है कि मैं पछताता हूँ, मैंने एकांत का फायदा गँवाया इसीलिए मेरी दुर्गति हो रही है। बड़े-बड़े जो हुए हैं संसार में मशहूर, उन्होंने एकांत का महत्त्व जाना है लेकिन हमें तो कोई फायदा नहीं हुआ... वे तपस्वी चल दिये ईश्वर को कोसते हुए।

रास्ते में १५-१६ साल के एक लड़के ने पूछा : ''आप कहाँ जा रहे हैं ?''

तपस्वी बोले : ''अपने घर को जा रहे हैं।''

''अच्छा, हम भी चलते हैं।''

''बेटे ! तेरे को कहाँ जाना है ?''

बोला : ''उसी गाँव की ओर जाना है।''

''कहाँ रहते हो ?''

बोला : ''आपके मोहल्ले से दो मील दूर ही छोटा गाँव है, उधर।'' चलते गये, चलते गये। रात हुई। किसीने दिया स्थान; सोचा, 'अतिथि हैं, तपस्या करके लौटे हैं।' दोनों का सत्कार किया। सोने के बर्तनों में भोजन कराया। बड़ा धनी भक्त था लेकिन बड़ा भावुक था।

सोने के बर्तनों में भोजन किया। सुबह दोनों रवाना हुए। लड़के ने सोने की एक कटोरी छुपा ली। यात्रा तो हुई। दिन भर चले, रात को दूसरे गाँव पहुँचे तो किसीने आतिथ्य नहीं दिया। भटक-भटक के किसी किसान के खलिहान में रात बितायी। लड़के ने वह सोने की कटोरी वहीं रख दी। तपस्वी देखता रहा।

सुबह हुई, चले। चलते-चलते नदी लाँघनी थी। एक बड़ा प्रभावशाली लड़का नदी में नहा रहा था। इस लड़के ने उस नहानेवाले लड़के का एकाएक गला पकड़ के पानी में दबोच दिया। अब पानी में दबोचा हुआ व्यक्ति २-३ मिनट से ज्यादा कैसे जिये ! वह तो मर गया, दम घुट गया उसका। तब उस तपस्वी से सहन नहीं हुआ। उसने लड़के को कहा कि ''आखिर तू यह क्या करता है ? मेरे साथ तू क्यों आया ?'' तपस्वी एकदम बौखला गया तो लड़के को टिकटिकी लगा के देखा। लड़के का रूप धीरे-धीरे गायब हो गया और वहाँ चतुर्भुजी भगवान प्रकट हो गये। ''प्रभु तुम !...''

भगवान बोले : ''भगवान जो करते हैं उसमें सब जगह अपनी खोपड़ी नहीं चलायी जाती। यह कैसा, वह कैसा... मैंने भजन किया, मुझे भगवान मिलें... मुझे यह मिले, वह मिले... तो यह मन मौजूद रहेगा। कई सृष्टियाँ पैदा कर-करके विलय कर रहा हूँ और सभीके हृदय में बैठे ख्याल रखता हूँ। कोई बुरा काम करता है तो धड़कनें बढ़ा देता हूँ, अच्छा काम करता है तो प्रोत्साहित करता हूँ, सत्प्रेरणा देता हूँ और किसीको अहंकार आ जाता है तो प्रतिद्वन्द्वी दे देता हूँ और विषाद आ जाता है तो मददगार दे देता हूँ। मेरी इतनी सुंदर व्यवस्था है फिर भी तुम्हारे जैसे १२-१२ साल झख मारने के बाद भी बोलते हैं, 'ऐसा क्यों नहीं हुआ... कोई आया नहीं... कुछ हुआ नहीं...' तुम्हें तुम्हारे कल्याण का क्या पता !

शिशु को अपने कल्याण का क्या पता ! सब

जगह अपनी खोपड़ी या अपनी मान्यता से, अपने नाप से सृष्टिकर्ता को या सृष्टि को नापना परेशानी का मूल है बेटे ! अभी तक तो हम तुम्हारे साथ बेटे की नाईं ही चल रहे थे, अब तुम बेटे हो गये।''

तपस्वी बोले : ''प्रभु ! हम बेटों के भी बेटे हैं लेकिन यह बात समझ में नहीं आती नाथ ! आपको भोजन मिला मेरे निमित्त अथवा मेरे को भोजन मिला आपके निमित्त... सोने की थाली में, और आपने वहाँ से कटोरी चुरा ली। आपको क्या कमी थी ?''

भगवान बोले : ''वह भगत था, भावनाप्रधान था। इतना भावनाप्रधान नहीं होना चाहिए कि अनजान अतिथि को सोने के बर्तनों में खिलाये। तो मैंने कटोरी चुरा ली, ताकि अब दूसरी बार नये लोगों से इस ढंग का व्यवहार नहीं करे। एक कटोरी में ही उसकी जान छूटी, नहीं तो दूसरे न जाने उसका कितना घाटा करते। तो थोड़ा घाटा करके मैंने उस भक्त की रक्षा कर ली।''

''तो फिर गाँव भर में भटके और कहीं रहने को नहीं मिला। खेत-खलिहान में रात बितायी और वहाँ कटोरी छोड़कर चल दिये ?''

भगवान बोले : ''खेत-खलिहानवाला चुप कैसे बैठेगा ! मेहमान आये थे, किसीने उन्हें नहीं रखा, हमारे यहाँ खेत-खलिहान में पड़े रहे और सोने की कटोरी छोड़ गये। तो गाँववाले जो निगुरे हैं, सेवा से वंचित हैं, सत्कर्म का महत्त्व नहीं जानते उन उल्लुओं को थोड़ा प्रकाश मिलेगा कि भाई ! अतिथि आये तो न जाने कोई सोने की कटोरी, कोई पुण्य की कटोरी छोड़ जायेगा तो लालच में सही, उनके द्वारा मानवता का थोड़ा व्यवहार होगा।''

''नाथ ! ये दोनों बातें तो समझ में आ गयीं लेकिन नदी पार करते समय एक बड़ा राजवी लड़का दिख रहा था। उसने आपको कुछ नहीं कहा और आपने जाते ही उसका गला पकड़ के, आपका बल तो असीम है, उसको मार के रवाना कर दिया बहाव में।''

भगवान बोले : ''वह मंत्री का लड़का था और मंत्री की नीयत बुरी हो गयी थी कि राजकुमार की हत्या करवा के फिर राजा को सांत्वना देंगे और मेरे बेटे की तरफ राजा का विचार करेंगे। अगर राजा इधर-उधर करेगा तो राजा को भी किनारे लगा देंगे और मेरा पुत्र राज्य करेगा मेरे इशारे से, मैं बुढ़ापा आराम से बिताऊँगा। राजा के लिए भी नीचे से सारा जाल बिछा के रखा है उसने। इन अभागों को पता नहीं कि बुढ़ापा कुकर्म करके आराम से नहीं बीतता है।''

औरंगजेब जैसा भी बुढ़ापे में छटपटाया और मौत के समय उसे शूल चुभ रहे थे, प्राण नहीं निकल रहे थे, तड़प रहा था। गांधीजी बोलते थे कि 'निमित्त हलका लेकर आप फल उत्तम चाहते हैं, काँटे बोकर आप फूल चाहते हैं, मुश्किल है। बबूल बोकर आप आम चाहते हैं तो मूर्खता है।' ऐसा करके - वैसा करके फिर आराम से जियेंगे, आराम से बुढ़ापा और सेवा-निवृत्ति का जीवन बितायेंगे... यह बिल्कुल बेवकूफी के सिवाय और कुछ नहीं है।

करम प्रधान बिस्व करि राखा।
जो जस करइ सो तस फलु चाखा॥

(श्री रामचरित. अयो.कां. : २१८.२)

भगवान बोले : ''गला इसीलिए दबाया कि उस छोरे में मंत्री की ममता थी और ममता-ममता में वह मंत्री सोचने लगा, 'मेरे बेटे को ही राजसत्ता मिले तो मैं आराम से रहूँगा।' यह उसका अधर्म था, भूल थी और फिर राजा को कैद करके हराम का राज्य उस छोरे को मिलता। वह छोरा अनर्थ करता और प्रजा त्राहिमाम् पुकारती। तो बड़ा अनर्थ टालने के लिए मैंने छोटा अनर्थ कर लिया और मैंने अपने हाथों से उसको भेज दिया तो उसकी दुर्गति तो नहीं होगी, दूसरे जन्म में कहीं बेटा हो जायेगा !''

तपस्वी बोले : ''सब जगह हम लोग अपनी खोपड़ी लगाते हैं इसलिए सिर चकराता है। प्रभु ! सब जगह आपकी सुंदर व्यवस्था है। ईश्वर कब, कहाँ, कैसी व्यवस्था करते हैं, यह मानवीय दिमाग से बहुत दूर की बात है।'' ❑

लक्ष्मीजी कहाँ ठहरती हैं और कहाँ से चली जाती हैं ?

'देवी भागवत' में कथा आती है कि जब देवराज इन्द्र राज्यहीन, श्रीहीन हो गये तो वे समस्त देवताओं सहित गुरुदेव बृहस्पतिजी को साथ में लेकर ब्रह्माजी के पास गये। देवगुरु बृहस्पतिजी ने सारा वृत्तांत ब्रह्माजी को कह सुनाया। तब ब्रह्माजी सबको लेकर भगवान नारायण के पास गये। परंतु वहाँ पहुँचते ही सभी देवतागण भयभीत हो गये क्योंकि वे श्रीहीन होने के कारण निस्तेज एवं भयग्रस्त थे।

भगवान श्रीहरि उनको ऐसा देखकर बोले : ब्रह्मन् तथा देवताओ ! भय मत करो। मेरे रहते तुम लोगों को किस बात का भय है ! मैं तुम्हें परम ऐश्वर्य को बढ़ानेवाली अचल लक्ष्मी प्रदान करूँगा। परंतु मैं कुछ समयोचित बात कहता हूँ, तुम लोग उस पर ध्यान दो। मेरे वचन हितकर, सत्य, सारभूत एवं परिणाम में सुखावह हैं। जैसे अखिल विश्व के सम्पूर्ण प्राणी निरंतर मेरे अधीन रहते हैं, वैसे ही मैं भी अपने भक्तों के अधीन हूँ। मैं अपनी इच्छा से कभी कुछ नहीं कर सकता। सदा मेरे भजन-चिंतन में लगे रहनेवाला निरंकुश भक्त जिस पर रुष्ट हो जाता है, उसके घर लक्ष्मीसहित मैं नहीं ठहर सकता - यह बिल्कुल निश्चित है।

मुनिवर दुर्वासा महाभाग शंकर के अंश व वैष्णव हैं। उनके हृदय में मेरे प्रति अटूट श्रद्धा भी है। उन्होंने तुम्हें शाप दे दिया है। अतएव तुम्हारे घर से लक्ष्मीसहित मैं चला आया हूँ; क्योंकि जहाँ शंखध्वनि नहीं होती, तुलसी का निवास नहीं रहता, शंकरजी की पूजा नहीं होती, वहाँ लक्ष्मी नहीं रहतीं।

ब्रह्मन् व देवताओ ! जिस स्थान पर मेरे भक्तों की निंदा होती है, वहाँ रहनेवाली महालक्ष्मी के मन में अपार क्रोध उत्पन्न हो जाता है। अतः वे उस स्थान को छोड़ देती हैं। जो मेरी उपासना नहीं करता तथा एकादशी और जन्माष्टमी के दिन अन्न खाता है, उस मूर्ख व्यक्ति के घर से भी लक्ष्मी चली जाती हैं। जो मेरे नाम तथा अपनी कन्या का विक्रय करता है एवं जहाँ अतिथि भोजन नहीं पाते, उस घर को त्यागकर मेरी प्रिया लक्ष्मी चली जाती हैं। जो अशुद्ध हृदय, क्रूर, हिंसक व निंदक है, उसके हाथ का जल पीने में भगवती लक्ष्मी डरती हैं, अतः उसके घर से वे चल देती हैं। जो कायर व्यक्तियों का अन्न खाता है, निष्प्रयोजन तृण तोड़ता है, नखों से पृथ्वी को कुरेदता रहता है, निराशावादी है, सूर्योदय के समय भोजन करता है, दिन में सोता व मैथुन करता है और जो सदाचारहीन है, ऐसे मूर्खों के घर से मेरी प्रिया लक्ष्मी चली जाती हैं।

जो अल्पज्ञानी व्यक्ति गीले पैर या नंगा होकर सोता है तथा निरंतर बेसिर-पैर की बातें बोलता रहता है, उसके घर से साध्वी लक्ष्मी चली जाती हैं। जो सिर पर तेल लगाकर उसीसे दूसरे के अंग को स्पर्श करता है, अपने सिर का तेल दूसरे को लगाता है तथा अपनी गोद में बाजा लेकर उसे बजाता है, उसके घर से रुष्ट होकर लक्ष्मी चली जाती हैं।

जो व्रत, उपवास, संध्या व भगवद्भक्ति से हीन है, उस अपवित्र पुरुष के घर से मेरी प्रिया लक्ष्मी चली जाती हैं। जो दूसरों की निंदा तथा उनसे द्वेष करता है, जीवों की सदा हिंसा करता है व दयारहित है, उसके घर से जगज्जननी लक्ष्मी चली जाती हैं। जिस स्थान पर भगवान श्रीहरि की चर्चा होती है और उनके गुणों का कीर्तन होता है, वहीं पर सम्पूर्ण मंगलों को भी मंगल प्रदान करनेवाली भगवती लक्ष्मी निवास करती हैं।

पितामह ! जहाँ भगवान व उनके भक्तों का यश गाया जाता है, वहीं उनकी प्राणप्रिया भगवती लक्ष्मी सदा विराजती हैं। जहाँ शंखध्वनि होती है, तुलसी का निवास रहता है व इनकी सेवा, वंदना होती है, वहाँ लक्ष्मी सदा विद्यमान रहती हैं। ❑

अनुभव का आदर कर लो तो काम बन जाय

(पूज्य बापूजी की मधुमय, ज्ञानवर्धक, अनुभवमय अमृतवाणी)

जीवन में रस हो लेकिन रस उद्‌गम स्थान पर ले जाय । जीवन में रस तो है लेकिन उद्‌गम-स्थान से दूर ले जाता है तो वह जीवन नीरस हो जाता है । जैसे पान-मसाले का रस, पति-पत्नी का विकारी रस अथवा वाहवाही का रस । रावण की वाहवाही बहुत होती थी लेकिन रस के उद्‌गम-स्थान से रावण दूर चला गया । रामजी के जीवन में रस का उद्‌गम-स्थान था, सत्संग था । श्रीकृष्ण के जीवन में रस था लेकिन उद्‌गम-स्थानवाला था । पत्ते हरे-भरे हैं, फूल महकते हैं तो मूल में रस है तभी पत्तों तक पहुँचा । ऐसे ही आपका मूल परमात्म-रस है तो व्यवहार रसीला हो जाता है । आपका दर्शन रसमय, आपकी वाणी रसमय...।

प्रेम की बोली का नाम संगीत है और प्रेम की चाल का नाम नृत्य है तथा परमात्म-प्रेम से भरे हुए व्यवहार का नाम भक्ति है और परमात्म-प्रेम से भरी हुई निगाहों का नाम ही नूरानी निगाहें है । श्रीकृष्ण निकलते थे तो सब लोग काम छोड़कर 'कृष्ण आये, कृष्ण आये' करके देखने को भागते थे, रस आता था उनसे, लेकिन कंस आता था तो 'कंस आया, कंस आया' करके घर में भाग जाते थे क्योंकि वह अहंकार को पोषता था, दूसरों को शोषित करके बाहर से रस भीतर भरता था और श्रीकृष्ण भीतर से रस बाँटते थे ।

रामजी आते तो रामजी को देखने के लिए किरात, भील, ये-वो भाग-भाग के आते लेकिन रावण निकलता तो लोग अपने घरों में भाग जाते । तो जो बाहर से अंदर रस भरता है वह रावण के रास्ते जाता है और जो अंदर से बाहर रस छलकाता है वह रामजी के रास्ते है । मर्जी तुम्हारी है, तुम बीच में हो । संसार में जाते हो तो रावण के रास्ते का रस लेनेवालों में उलझ जाते हो । सत्संग में आते हो तो राम का रस लेनेवालों के सम्पर्क में आते हो । तुम्हारे जीवन में दोनों अनुभूतियाँ हैं । बिना वस्तु के, बिना व्यक्ति के सुखमय, रसमय दिन बीत जाते हैं सत्संग के, यह तुम्हारा अनुभव है और घर में सारे रस के साधन होते हुए भी जीवन थकानभरा हो जाता है, बोझीला हो जाता है । बिल्कुल तुम्हारे अनुभव का तुम आदर करो ।

तुम शास्त्र की बात न मानो, गुरु की बात न मानो, धर्म की बात न मानो, केवल अपना अनुभव मान लो तो भी तुम्हारा जीवन धन्य हो जायेगा । संसार के सुख में दुःख छुपा है, हर्ष में शोक छुपा है, जीवन में मृत्यु छुपी है, संयोग में वियोग छुपा है, मित्रता में नफरत, शत्रुता और एक-दूसरे का त्याग छुपा है लेकिन भगवान में नित्य नवीन रस छुपा है... । उसमें भी थोड़ी चरपराहट आती है लेकिन प्रेम में कमी नहीं होती । शुद्ध प्रेम नित्य नवीन रस देता है । काम दिन-दिन क्षीण होता है और विकृतरूप होता है और प्रेम दिन-दिन बढ़ता है, सुकृतरूप होता है ।

संसारी विकार भोगने के बाद आप थक जाते हैं, हताश हो जाते हैं, असारता लगती है । श्मशान में जाते हैं तो लगता है कि ये सब मर ही गये, अपन भी मरनेवाले हैं । (शेष पृष्ठ १७ पर)

जब रामजी ने हँसी पर लगायी रोक

'आनंद रामायण' में कथा आती है कि १४ वर्ष के वनवास के बाद जब भगवान श्रीरामचन्द्रजी का राज्याभिषेक हो गया तो एक दिन आनंदोत्सव चल रहा था । उस समय सभा का एक व्यक्ति नर्तकी का नृत्य देखकर जोर से हँस पड़ा । हँसी सुन के रामजी को रावण-युद्ध की बात याद आ गयी। जब वे रावण के मस्तकों को काटकर आकाश में उड़ा देते थे तो वे मस्तक भयानक दाँतों को दिखाकर हँसते हुए नीचे गिरते थे । रामजी जब भी किसीका हास्य सुनते तो उनकी आँखों के सामने वही दृश्य घूमने लगता था । अतः रामजी ने आदेश दिया कि ''हमारे राज्य में कोई नहीं हँसेगा । जो हँसेगा उसे दंड दिया जायेगा ।''

अब तो सभीने हँसना छोड़ दिया । कोई भी पुरवासी एवं देशवासी रामजी के दण्ड-भय से एकांत में भी नहीं हँसता था । ऐसा वर्ष भर चलता रहा ।

हँसना बंद होने से उकताहट होने लगी। प्रसन्नता के देवता जो चित्त में रहते हैं, इन्द्र के पास जाकर अपनी व्यथा बताकर बोले : ''हमारे पर ठाकुरजी ने बंदिश लगा दी है । सृष्टिक्रम में तो हँसी की भी जरूरत है । इससे कर्मांग पूजनादि सत्कार्य लुप्त होते जा रहे हैं । देवेन्द्र ! हम हँसी के देवता धरती से चले जायें यह कैसे सम्भव हो सकता है ! आप कुछ करिये ।''

इन्द्र ने ब्रह्माजी के पास जाकर यह बात बतायी । ब्रह्माजी ने सोचा कि 'रामजी को उपदेश द्वारा अथवा दूसरा कुछ करके उनका कायदा तो रद्द नहीं किया जा सकता है । चलो अब 'राम' में ही विश्राम पाओ ।'

ब्रह्माजी ने 'राम' में ही गोता लगाया ।

रमन्ते योगिनः यस्मिन् सः रामः ।

'जिसमें योगी लोगों का मन रमण करता है, उस अंतर्यामी को कहते हैं 'राम' ।'

ब्रह्माजी को युक्ति सूझ गयी । वे अयोध्या की सीमा पर एक विशाल पीपल के वृक्ष में आकर प्रविष्ट हो गये और उस रास्ते से आने-जानेवाले लोगों को देखकर जोरों से हँसने लगे ।

लकड़हारे पीपल के पेड़ के नीचे आकर थकान मिटाते थे । अन्य पेड़ों की अपेक्षा पीपल के पेड़ के नीचे थकान जल्दी मिटती है और बुद्धि सूझबूझ की धनी बन जाती है ।

एक लकड़हारा वृक्ष के नीचे आया तो पीपल के भीतर बैठे हुए ब्रह्माजी हँसे, जिससे वह भी खिलखिलाकर हँसा और लकड़ी का बोझा लिये अयोध्या नगरी में जा पहुँचा । रास्ते में उसे पीपल की हँसी की याद आयी तो फिर से ठहाका लगाकर हँसने लगा - हाऽऽ... हाऽऽ... ।

चौराहे पर खड़े सिपाही ने देखा तो सिपाही भी हँसने लग गया - हाऽऽ... हाऽऽ... । सिपाही जब राजसभा में गया तो लकड़हारे की हँसी याद आयी और वह हँस पड़ा परंतु हँसी संक्रामक होती है । अतः सिपाही को हँसते देख सभा में बैठे सभी लोग जोर से हँसने लगे - हाऽऽ... हाऽऽ... । सभी लोगों को हँसते देखकर रामजी भी हँसने लगे । रामजी तुरंत हँसी रोककर सोचने लगे कि

'दूसरे लोग हँसे तो हँसे, मैं क्यों हँसा ?' लेकिन क्षण भर बाद रामजी को फिर से हँसी आ गयी। पूरी चेष्टा करने पर भी हँसी नहीं रोक पाये।

रामजी ने सभा के लोगों से पूछा : ''आप क्यों हँसे ?''

सभा के लोगों ने कहा : ''हम सिपाही को देखकर हँसने लगे थे।'' सिपाही ने कहा : ''मैं लकड़हारे को देखकर हँसा।'' लकड़हारे ने कहा : ''मैं पीपल की हँसी से हँसा।'' और रामजी ने सैनिकों को उस वृक्ष को काटने की आज्ञा दे दी।

सैकड़ों-हजारों लोग वृक्ष को काटने के लिए गये लेकिन वृक्ष में बैठे ब्रह्माजी ने उन सबको पत्थर फेंककर भगा दिया। ऐसा करते-करते रामजी ने सुमंत, लव-कुश और शत्रुघ्न को भेजा। परंतु सुमंत बेहोश हो गये, लव-कुश और शत्रुघ्न के रथ के घोड़े बैठ गये।

यह सुनकर रामजी गुरु वसिष्ठजी की शरण में गये। वसिष्ठजी ने समस्या-समाधान के लिए वाल्मीकिजी को बुलवाया।

वाल्मीकिजी सारी घटना रामजी को बताकर बोले : ''यदि आप सदा के लिए लोगों का हँसना रोक देंगे तो बड़ा अनर्थ हो जायेगा। आप कोई ऐसा उपाय कीजिये जिससे देवता तथा मनुष्य सभी प्रसन्न रहें। हँसी सबको सुख देनेवाली, मंगलमयी और लक्ष्मीसूचक है। हँसी से बढ़कर कोई चीज है ही नहीं। हे रघुनंदन ! वही पुरुष धन्य है, जिसका मुखमण्डल सदा हँसता हुआ दिखता है और वह पुरुष अधम है, जिसका मुख सदा क्रोध से युक्त रहता है। अतः आप मेरी यह बात मान लीजिये।''

रामजी आज्ञा शिरोधार्य करते हुए बोले : ''हे मुनिवर ! आप जैसा कहते हैं वैसा ही होगा।'' तब से हँसी पर से रोक हट गयी और प्रजा में आनंद-उल्लास छा गया। □

किसके गुरु कौन ?

निम्नलिखित गुरुभक्तों के गुरुओं के नाम दी गयी वर्ग पहेली में से खोजें।

१. मैत्रेय ऋषि   २. नचिकेता
३. आरुणि   ४. नारदजी
५. सलूका-मलूका   ६. बाला-मरदाना
७. तोटकाचार्य   ८. श्री रामकृष्ण परमहंस
९. पूरणपोड़ा   १०. राजा जनक
११. स्वामी लीलाशाहजी
१२. संत श्री आशारामजी बापू

बा	तु	ट	य	मा	व	ए	फि	त्व	या	भ	ऋ	न	वृ	म
सं	न	म	जी	थ	गी	ख	ण	जी	च	बी	र्य	ष	र	ला
झ	त	ज	र	र	द	नें	श्र	व	न	सु	त्र	ना	ञ	श्म
ट	घ	अ	मा	य	बी	व	दे	ज	रा	म	य	वल	धो	न
श्म	ला	द्य	कु	शं	त्ति	क	भा	क्य	ई	क	श्र	झ	गु	स
यो	क	र	नत	थ	न	द	जी	री	पु	ता	तो	जी	ञ	ज
ज	नि	ऐ	स	ना	धौ	ह	र्य	द	ब	सृ	क्य	ध	व	यो
त्थ	यो	मु	रु	जी	शा	ई	चा	ल	नं	वल	क्ष	ट	ष्टा	ठ
झ	जू	गु	क्र	ला	स्य	ए	रा	क्र	ज्ञ	वा	म्य	खं	च	ल
ल	ऐ	ता	ली	व	ट	ढ़	क	या	जी	धौ	श	ज	तो	क्य
गण	र	मी	कु	जी	ष्टा	ब	शं	ना	द	नत	गु	के	म	ध
झा	स्वा	त्ति	र्य	थ्य	दू	अ	द्य	यो	थ	ज्ज	ठ	रु	न	व्स
नें	टी	आ	मुं	णैः	श्नि	ढ़	आ	म	क्र	जी	ड़	त्र	थ	भा
श्म	र	ल	प	ता	द्वे	मां	स्था	नि	ऋ	ब	क्षा	ष्टि	श्र	त्ति
या	जू	र	र्य	थ	व	ह	य	ड़	गण	ष	अ	रु	का	भ

अंक २२७ की पहेलियों के उत्तर

महापुरुषों के महान लक्षण :

समदुःखसुखः स्वस्थः समलोष्टाश्मकांचनः।
तुल्यप्रियाप्रियो धीरस्तुल्यनिन्दात्मसंस्तुतिः॥
मानापमानयोस्तुल्यस्तुल्यो मित्रारिपक्षयोः।
सर्वारम्भपरित्यागी गुणातीतः स उच्यते॥
(श्रीमद् भगवद्गीता : १४.२४-२५)

पहेलियाँ : १. गुरु-शिष्य का नाता, जीव-ब्रह्म का नाता २. श्रीमद् भगवद्गीता ३. ब्रह्मज्ञानी महापुरुष ४. श्री आशारामायण ५. आयु, विद्या, यश और बल।

भारतीय संस्कृति के अनमोल सद्गुण

अक्रोध और क्षमा

राजा युधिष्ठिर अक्रोध और क्षमा के मूर्तिमान स्वरूप थे। 'महाभारत' के वन पर्व में कथा आती है कि द्रौपदी ने एक बार युधिष्ठिरजी के मन में क्रोध का संचार करने के लिए अतिशय चेष्टा की। उसने कहा : ''नाथ ! मैं राजा द्रुपद की कन्या हूँ, पाण्डवों की धर्मपत्नी और धृष्टद्युम्न की बहन हूँ। मुझको जंगलों में मारी-मारी फिरती देखकर तथा अपने छोटे भाइयों को वनवास के घोर दुःख से व्याकुल देखकर भी यदि आपको धृतराष्ट्र के पुत्रों पर क्रोध नहीं आता तो इससे मालूम होता है कि आपमें जरा भी क्रोध नहीं है। परंतु देव ! जिस मनुष्य में क्रोध का अभाव है, जो क्रोध के पात्र पर भी क्रोध नहीं करता, वह तो क्षत्रिय कहलाने योग्य ही नहीं है।

जो उपकारी हो, जिसने भूल या मूर्खता से कोई अपराध कर दिया हो अथवा अपराध करके जो क्षमाप्रार्थी हो गया हो, उसको क्षमा करना तो क्षत्रिय का परम धर्म है, परंतु जो जानबूझकर बार-बार अपराध करता हो, उसको भी क्षमा करते रहना क्षत्रिय का धर्म नहीं है। अतः स्वामी ! जानबूझकर नित्य ही अनेकों अपराध करनेवाले ये धृतराष्ट्र-पुत्र क्षमा के पात्र नहीं बल्कि क्रोध के पात्र हैं। इन्हें समुचित दण्ड मिलना ही चाहिए।''

यह सुनकर राजा युधिष्ठिर ने उत्तर दिया : ''परम बुद्धिमती द्रौपदी ! क्रोध ही मनुष्यों को मारनेवाला और क्रोध ही यदि जीत लिया जाय तो अभ्युदय करनेवाला है। उन्नति और अवनति दोनों का मूल क्रोध ही है।

अतः हे द्रौपदी ! धीर पुरुषों द्वारा त्यागे हुए क्रोध को मैं अपने हृदय में कैसे स्थान दे सकता हूँ ! क्रोध के वशीभूत हुआ मनुष्य तो सभी पापों को कर सकता है। वह अपने गुरुजनों की हत्या भी कर सकता है। श्रेष्ठ पुरुषों का अपमान भी कर देता है।

यदि सभी क्रोध के वशीभूत हो जायें तो पिता पुत्रों को मारेंगे और पुत्र पिता को, पति पत्नियों को मारेंगे और पत्नियाँ पतियों को। क्रोधी पुरुष को अपने कर्तव्य-अकर्तव्य का ज्ञान बिल्कुल नहीं रहता, वह जो चाहे सो अनर्थ बात-की-बात में कर डालता है। उसे वाच्य-अवाच्य का भी ध्यान नहीं रहता, वह जो मन में आता है वही बकने लगता है। अतः तुम्हीं बतलाओ, महाअनर्थों के मूल क्रोध को मैं कैसे आश्रय दे सकता हूँ ?

आत्मानं च परांश्चैव त्रायते महतो भयात्।
क्रुध्यन्तमप्रतिक्रुध्यन् द्वयोरेष चिकित्सकः ॥

'क्रोध करनेवाले पुरुष के प्रति जो बदले में क्रोध नहीं करता, वह अपने को और दूसरों को भी महान भय से बचा लेता है। वह अपने और पराये दोनों के दोषों को दूर करने के लिए चिकित्सक बन जाता है।' **(महाभारत, वन पर्व : २९.९)**

द्रौपदी ! मूर्ख लोग क्रोध को ही सदा तेज मानते हैं परंतु रजोगुणजनित क्रोध का यदि मनुष्यों के प्रति प्रयोग हो तो वह लोगों के नाश का कारण होता है। क्षमा तेजस्वी पुरुषों का तेज, तपस्वियों का ब्रह्म, सत्यवादी पुरुषों का सत्य है। क्षमा यज्ञ है और क्षमा शम (मनोनिग्रह) है। जिसका महत्त्व ऐसा बताया गया है उसे मेरे जैसा मनुष्य कैसे छोड़ सकता है ! अतः मैं यथार्थ रूप से क्षमा को ही अपनाऊँगा।''

धर्मराज युधिष्ठिर जैसे अक्रोध के उपासकों का आचार-व्यवहार उन्नति के इच्छुक व्यक्तियों, साधकों के लिए बहुत ही उपयोगी है। महर्षि दुर्वासा, ब्रह्मर्षि विश्वामित्रजी, रमण महर्षि जैसे

जीवन्मुक्त महापुरुष आवश्यकता पड़ने पर क्रोध को वश में रखते हुए उसका आवाहन और विसर्जन करते हैं। रमण महर्षि के आगे तर्क-कुतर्क करके अपनी विद्वत्ता दिखानेवाले एक पंडित पर वे ऐसे तो बरस पड़े कि डंडा उठाकर दूर तक उसका पीछा किया। वापस आये तो उनके चेहरे पर वही परम शांति झलक रही थी। घमंडियों, दुर्जनों से पिण्ड छुड़ाने के लिए ऐसी फुफकार लगाना क्रोध नहीं कहा जाता, अतः यह वर्जित नहीं है।

माँ बालक की और सद्गुरु शिष्य की नासमझी पर कई बार क्रोध करते दिखते हैं परंतु उससे उनके हृदय में जलन नहीं पैदा होती, अतः यह डाँटना-फटकारना भी शास्त्र-निंदित क्रोध नहीं है। इस प्रकार हृदय को उद्विग्न किये बिना शुद्ध हितभावना से फुफकार या डाँट लगाना भारतीय संस्कृति में वर्जित नहीं है, क्योंकि इसमें हित की प्रधानता है।

भारतीय संस्कृति का क्या दिव्य ज्ञान है, क्या सुंदर उपदेश है ! कितने उच्च भाव हैं ! तेज, क्षमा, समता, विवेक, शांति, हित व व्यवस्था का कितना सुंदर सम्मिश्रण है अपनी संस्कृति में ! प्रत्येक मनुष्य इस ज्ञान को जीवन में लाकर दुःख, शोक, अशांति, उद्विग्नता से परे सुख, शांति एवं आनंदमय जीवन जी सकता है। ❐

उपयोगी मुद्रा

शून्य मुद्रा

लाभ : यह मुद्रा करने से कान के अनेक रोग मिट जाते हैं। जैसे - कान में आवाज या दर्द होना, मवाद निकलना, बहरापन आदि। यह मुद्रा ४ से ५ मिनट तक करनी चाहिए।

विधि : सबसे लम्बी उँगली (मध्यमा) को अंदर की ओर मोड़कर अँगूठे के मूल में लगायें और अँगूठे से हलका-सा दबायें। शेष तीनों उँगलियाँ सीधी रहें। **(आश्रम की पुस्तक 'जीवन विकास' से क्रमशः)**

तू सब जानता है

(पूज्य बापूजी के सत्संग-अमृत से)

एक महात्मा थे। वे गिरनार (गुजरात) की तलहटी में ध्यान कर रहे थे। एक रात को चोर चोरी करके उसी तरफ भागे जहाँ ये जोगी ध्यान कर रहे थे। चोर वहीं सामान छोड़कर भाग गये।

अब पुलिस आयी, बोली : ''यह बाबा रात को तो चोरी करता है और दिन में आँखें मूँद के बैठा है। ऐ बाबा !...'' ऐसा करके पुलिस निर्दोष महात्मा को पकड़कर ले गयी। पुलिस ने क्या किया होगा, आप जानते हो। पुलिस के हाथ में कोई चोर आ जाय तो...

निर्दोष महात्मा को पुलिस ने खूब पीटा और राजा ने सजा सुना दी। तब निर्दोष महात्मा ऐसा नहीं कहते कि 'भगवान ! ये अपराधी हैं, तू इनको माफ कर दे।' - यह जीसस बोलते हैं लेकिन महात्मा इससे भी ऊँची बात बोलते हैं : **'प्रभु ! मारा वालुड़ा ! तुं बधुं जाणे छे.** (प्रभु ! मेरे प्यारे ! तू सब जानता है।)'

अरे सौराष्ट्र के महात्मा, तुमको हजार बार धन्यवाद है ! जीसस बोलते थे : 'इनको माफ कर दो।' माफ कर दो अर्थात् अपराधी तो हैं पर तुम इनको माफ कर दो। लेकिन ये महात्मा पुलिस को अपराधी भी नहीं मानते। **'प्रभु ! तुं बधुं जाणे छे.** तू सब जानता है कब का क्या लेना-देना होगा।'

अखिल ब्रह्माण्डमां एक तुं श्रीहरि ।
जूजवे रूपे अनंत भासे ॥

महादुःख है, सजा मिल रही है, मृत्युदंड मिल रहा है पर महात्मा तो आनंदित हो रहे हैं, **'प्रभु ! तुं बधुं जाणे छे.** मृत्युदंड जिसको मिलना है वह तो शरीर है। मेरी तो मृत्यु होती ही नहीं। तू सब जानता है।'

धन्यवाद है भारतीय संस्कृति के दुलारों को, प्यारों को ! कैसा ऊँचा नजरिया है ! कैसी ऊँची प्रभुभक्ति है ! ❐

भारतीय संस्कृति का स्वाभिमान

(पं. मदनमोहन मालवीय जयंती : २५ दिसम्बर)

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के संस्थापक पंडित मदनमोहन मालवीयजी हिन्दू धर्म व संस्कृति के अनन्य पुजारी थे। उन्होंने अपना सारा जीवन भारत माता की सेवा में अर्पित कर दिया था। वे जितने उदार, विनम्र, निरभिमानी, परदुःखकातर एवं मृदु थे उतने ही संयमी, दृढ़, स्वाभिमानी व अविचल योद्धा भी थे। मालवीयजी के जीवन में हिन्दू धर्म व संस्कृति का स्वाभिमान कूट-कूटकर भरा था।

एक बार कलकत्ता विश्वविद्यालय के उपकुलपति ने मालवीयजी के कार्यकाल से प्रसन्न होकर उनको एक पत्र भेजा। उसे पढ़कर मालवीयजी असमंजस में पड़ते हुए धीमी आवाज में बोले : ''उन्होंने यह तो अजीब प्रस्ताव रखा है। क्या कहूँ, क्या लिखूँ ?''

पास बैठे एक मित्र ने पूछा : ''पंडितजी ! ऐसी क्या अजीब बात लिखी है ?''

''कलकत्ता विश्वविद्यालय के उपकुलपति महोदय मेरी सनातन उपाधि छीनकर एक नयी उपाधि देना चाहते हैं। इस पत्र में लिखा है कि 'कलकत्ता विश्वविद्यालय' आपको 'डॉक्टरेट' की उपाधि से अलंकृत करके आपको गौरवान्वित करना चाहता है।''

तभी एक अन्य सज्जन ने हाथ जोड़कर कहा : ''प्रस्ताव तो उचित ही है। आप ना मत कर दीजियेगा। यह तो हम वाराणसीवासियों के लिए विशेष गर्व की बात होगी।''

मालवीयजी बोले : ''अरे ! तुम तो बहुत ही भोले हो भैया ! इससे वाराणसी के गौरव में वृद्धि नहीं होगी। यह तो वाराणसी के पांडित्य को जलील करने का प्रस्ताव है।'' और तुरंत ही उन्होंने उस पत्र का उत्तर लिखा : 'मान्य महोदय ! आपके प्रस्ताव के लिए धन्यवाद। मेरे उत्तर को अपने प्रस्ताव का अनादर न मानते हुए आप उस पर पुनर्विचार ही कीजियेगा। मुझे आपका यह प्रस्ताव अर्थहीन लग रहा है। मैं जन्म और कर्म दोनों से ही ब्राह्मण हूँ। जो भी ब्राह्मण धर्म की मर्यादाओं के अनुरूप जीवन बिताता है, उसके लिए 'पंडित' से बढ़कर अन्य कोई भी उपाधि नहीं हो सकती। मैं 'डॉक्टर मदनमोहन मालवीय' कहलाने की अपेक्षा 'पंडित मदनमोहन मालवीय' कहलवाना अधिक पसंद करूँगा। आशा है आप इस ब्राह्मण के मन की भावना का आदर करते हुए इसे 'पंडित' ही बना रहने देंगे।'

मालवीयजी की कार्य करने की शैली बड़ी मधुर और सरल थी। सहयोगी स्वभाव एवं अन्य सद्गुणों के कारण आलोचक भी उनके कायल हो जाते थे। वृद्धावस्था में जब मालवीयजी तत्कालीन वाइसराय की परिषद (काउंसिल) के वरिष्ठ पार्षद (काउंसलर) थे, तब उनकी गहन और तथ्यपूर्ण आलोचनाओं के बावजूद वाइसराय ने एक दिन कहा : ''पंडित मालवीय ! हिज मेजेस्टी की सरकार आपको 'सर' की उपाधि से अलंकृत करना चाहती है।''

मालवीयजी मुस्कराते हुए बोले : ''आपका बहुत-बहुत धन्यवाद कि आप मुझे इस योग्य मानते हैं, किंतु मैं वंश-परम्परा से प्राप्त अपनी सनातन उपाधि नहीं त्यागना चाहता। मुझे

'पंडित' की उपाधि ईश्वर ने प्रदान की है । मैं इसे त्यागकर उसके बंदे की दी गयी उपाधि को क्यों स्वीकार करूँ !''

वाइसराय यह सुनकर हक्का-बक्का रह गया । थोड़ी देर बाद बोला : ''आपका निर्णय सुनकर हमें आपके पांडित्य पर जो मान था वह दुगना हो गया । आप वाकई सच्चे पंडित हैं जो उस उपाधि की गौरव-गरिमा की रक्षा के लिए कोई भी प्रलोभन त्याग सकते हैं ।''

इसी प्रकार एक बार काशी के पंडितों की एक सभा ने मालवीयजी का नागरिक अभिनंदन कर उन्हें 'पंडितराज' की उपाधि दिये जाने का प्रस्ताव रखा । यह सुनकर वे बोले : ''अरे पंडितो ! पांडित्य का मखौल क्यों बना रहे हो ? पंडित की उपाधि तो स्वतः ही विशेषणातीत है । इसलिए आप मुझको पंडित ही बना रहने दीजिये ।''

सभीका सिर नीचे झुक गया । इस प्रकार उनके जीवन में कई बार ऐसी घटनाएँ घटीं परंतु वे न तो 'डॉक्टर' बने, न 'सर' हुए और न ही 'पंडितराज', बल्कि इन सबसे ऊपर स्वाभिमान के साथ जीवन भर अपनी संस्कृति से विरासत में मिले 'पांडित्य' का गौरव बढ़ाते रहे । ❑

(पृष्ठ ११ से 'अनुभव का आदर कर लो तो काम बन जाय' का शेष) तो शरीर मर जायेगा यह भी अपना अनुभव है और विकार भोगने के बाद जीवन नीरस हो जाता है, शरीर थक जाता है यह भी अनुभव है। तो इस अनुभव का आदर करके संयम और सत्य रस पाने का इरादा कर लो । आपका तो काम बन जायेगा, आपकी आँखों से जो तन्मात्राएँ निकलेंगी, आपको छूकर जो हवामान में, वातावरण में तरंगें निकलेंगी वे कइयों को सुख, शांति और आनंद बख्शेंगी । इसको बोलते हैं 'चिन्मय रस' । ऐसा आपका आत्मा-परमात्मा का रस है ! ❑

सुख और यश में विशेष सावधान !

- पूज्य बापूजी

सुख और दुःख, अनुकूलता और प्रतिकूलता प्रकृति व प्रारब्धवेग से आते हैं । फिर अंदर सुखाकार-दुःखाकार वृत्ति पैदा होती है । अनजान लोग उस वृत्ति से जुड़कर 'मैं सुखी हूँ, मैं दुःखी हूँ' ऐसा मान लेते हैं । अपने द्रष्टा स्वभाव को नहीं जानते । सुख आये तो बहुतों के हित में लगाना चाहिए, इससे आपका परम आनंद जगेगा । दुःख आये तो विवेक-वैराग्य जगाना चाहिए । इससे आप संसार के फँसाव से निकलोगे लेकिन अज्ञानी, निगुरे लोग सुख के भोगी हो जाते हैं । सुख उन्हें खोखला बना देता है । सुख और यश में विशेष सावधान रहो ।

मान पुड़ी है जहर की, खाये सो मर जाये ।
चाह उसीकी राखता, सो भी अति दुःख पाये ॥

बड़े के सम्पर्क में रहो जो आपको टोक सके । जब भी यश और पद मिले तो जो आपको टोकनेवाले हैं, उनका प्रयत्नपूर्वक सम्पर्क करो । इससे आपका यश और पद सुशोभनीय होगा । अगर चमचों के बीच रहोगे तो सत्ता पाकर किसको मद नहीं आया ? और मद में गलती किसने नहीं की ? बड़े-बड़े लोग भी गलती करते हैं । रावण ने भी तो वही गलती की थी । सुधार-सुधार, विकास-विकास... रावण और हिरण्यकश्यपु ने भी तो विकास किया था ! ऐसा विकास आज का कोई नेता सोच भी नहीं सकता । फिर भी रावण और हिरण्यकश्यपु का वह अहंकारवाला विकास विनाश की तरफ गया । इसलिए जिनके पास पद और सत्ता हो वे उच्चकोटि के संतों-महापुरुषों के सम्पर्क में रहें तो उनका पद और सत्ता सुशोभनीय होंगे । जैसे - राजा जनक, राजा अश्वपति, ध्रुव, प्रह्लाद, राजा राम । ❑

त्रिबंधयुक्त प्राणायाम और योगाभ्यास करो

त्रिबंध करके प्राणायाम करने से विकारी जीवन सहज भाव से निर्विकारिता में प्रवेश करने लगता है। मूलबंध से विकारों पर विजय पाने का सामर्थ्य आता है। उड्डियान बंध से व्यक्ति उन्नति में विलक्षण उड़ान ले सकता है। जालंधर बंध से बुद्धि विकसित होती है। कोई व्यक्ति अनुभवी महापुरुष के सान्निध्य में त्रिबंध के साथ प्रतिदिन १२ प्राणायाम करे तो प्रत्याहार सिद्ध होने लगेगा। १२ प्रत्याहार से धारणा सिद्ध होने लगेगी। धारणाशक्ति बढ़ते ही प्रकृति के रहस्य खुलने लगेंगे, स्वभाव की मिठास, बुद्धि की विलक्षणता, स्वास्थ्य का सौरभ आने लगेगा। १२ धारणा सिद्ध होने पर ध्यान लगेगा। १२ गुना ध्यान सिद्ध होने पर सविकल्प समाधि होने लगेगी। सविकल्प समाधि का १२ गुना समय पकने पर निर्विकल्प समाधि लगेगी।

इस प्रकार छः महीने अभ्यास करनेवाला साधक सिद्धयोगी बन सकता है। ऋद्धि-सिद्धियाँ उसके आगे हाथ जोड़कर खड़ी रहती हैं। यक्ष, गंधर्व, किन्नर उसकी सेवा के लिए उत्सुक होते हैं। उस पवित्र पुरुष के निकट संसारी लोग मनौती मानकर अपनी मनोकामना पूर्ण कर सकते हैं। साधन करते समय रग-रग में इस महान लक्ष्य की प्राप्ति के लिए धुन लग जाय।

ब्रह्मचर्य-व्रत पालनेवाला साधक, पवित्र जीवन जीनेवाला व्यक्ति महान लक्ष्य की प्राप्ति में सफल हो सकता है। हे मित्र ! बार-बार असफल होने पर भी तुम निराश मत होओ। अपनी असफलताओं को याद करके हारे हुए जुआरी की तरह बार-बार गिरो मत। ब्रह्मचर्य की इस पुस्तक (दिव्य प्रेरणा-प्रकाश) को फिर-फिर से पढ़ो। प्रातः निद्रा से उठते समय बिस्तर पर ही बैठे रहो और दृढ़ भावना करो : 'मेरा जीवन प्रकृति के थप्पड़ खाकर पशुओं की तरह नष्ट करने के लिए नहीं है। मैं अवश्य पुरुषार्थ करूँगा, आगे बढ़ूँगा। हरि ॐ... ॐ... ॐ... मेरे भीतर परब्रह्म परमात्मा का अनुपम बल है। हरि ॐ... ॐ... ॐ... तुच्छ एवं विकारी जीवन जीनेवाले व्यक्तियों के प्रभाव से मैं अपने को विनिर्मुक्त करता जाऊँगा। हरि ॐ... ॐ... ॐ...' सुबह में इस प्रकार का प्रयोग करने से चमत्कारिक लाभ प्राप्त कर सकते हो।

सर्वनियंता सर्वेश्वर को कभी प्यार करो... कभी प्रार्थना करो... कभी भाव से, विह्वलता से आर्तनाद करो। वे अंतर्यामी परमात्मा हमें अवश्य मार्गदर्शन देते हैं। बल-बुद्धि बढ़ाते हैं। साधक तुच्छ, विकारी जीवन पर विजयी होता जाता है। ईश्वर का असीम बल तुम्हारे साथ है। निराश मत हो भैया ! हताश मत हो। बार-बार फिसलने पर भी सफल होने की आशा और उत्साह मत छोड़ो।

शाबाश वीर... ! शाबाश... ! हिम्मत करो, हिम्मत करो। ब्रह्मचर्य-सुरक्षा के उपायों को बार-बार पढ़ो, सूक्ष्मता से विचारो। उन्नति के हर क्षेत्र में तुम आसानी से विजेता हो सकते हो। करोगे न हिम्मत ? अति खाना, अति सोना, अति बोलना, अति यात्रा करना, अति मैथुन करना अपनी सुषुप्त योग्यताओं को धराशायी कर देता है, जबकि संयम और पुरुषार्थ सुषुप्त योग्यताओं को जगाकर जगदीश्वर से मुलाकात करा देता है।

(आश्रम से प्रकाशित 'दिव्य प्रेरणा-प्रकाश' पुस्तक से) ☐

श्री रामदास काठिया बाबा

(गतांक से आगे)

पुत्र के संन्यास की खबर सुनते ही पिता आये और उनके गुरुदेव से अनुनय-विनय करके कुछ दिनों के लिए रामदास को घर ले गये। अत्यधिक स्नेहवश माता सदा रोती रहती थीं, जिससे साधना में विघ्न होता देख रामदास घर से निकल गये और सीधे गुरुजी की सेवा में आ गये। फिर जीवन भर गाँव वापस नहीं लौटे।

पूर्वकाल के योगी शिष्यों की कड़ी परीक्षा लेकर ही उन्हें यौगिक शक्तियाँ प्रदान करते थे। गुरु की कसौटी पर खरे उतरनेवाले ही लक्ष्य को पाते हैं। आश्रम में रामदास के लिए गुरुदेव का सख्त आदेश था कि 'शाम के बाद धूनी को जगाये रखना। धूनी के पास आसन बिछाकर भजन करते रहना। सूर्यास्त के बाद कहीं बाहर मत जाना।'

जाड़े के दिन थे। कपड़े के नाम पर उनके पास एक उत्तरीय (ऊपर पहनने का कपड़ा) था, जिससे शीत-निवारण के लिए धूनी के पास बैठे रहना पड़ता था। भोजन भी एक वक्त मिलता था। धूनी से कुछ दूर फूस की झोंपड़ी में गुरुदेव रहते थे। गुरुदेव के कठोर अनुशासन के कारण अन्य शिष्य भाग गये पर अपनी गुरुभक्ति एवं दृढ़ निष्ठा के कारण रामदास नहीं गये। रामदासजी बाहर खुली जगह में आसन जमाकर ध्यान-भजन करने लगे। शाम से सुबह तक बर्फ पड़ती। इससे सामने आग जलाकर रात भर गुरु की आज्ञानुसार भजन करते।

एक रात को थोड़ी देर के लिए उन्हें आलस्य आ गया और बर्फ गिरने से आग बुझ गयी। जाड़े के मारे रामदास काँपने लगे। शरीर ठिठुर रहा था। सोचा, 'अगर धूनी को चेतन नहीं किया तो ठिठुरकर मर जाऊँगा।' मन में गुरुजी का डर था कि वे क्या कहेंगे। अंत में साहस करके गये और चुपचाप कुटिया के बाहर खड़े हो गये।

गुरुदेव ने पूछा : ''बाहर कौन खड़ा है ?''

''भगवन् ! मैं रामदास हूँ।''

''रात को आसन छोड़कर क्यों आये हो ?''

''महाराज ! मेरी धूनी बुझ गयी इसलिए आग माँगने आया हूँ।''

गुरुदेव ने कहा : ''लगता है सो गये थे वरना धूनी न बुझती। अपने माता-पिता को दुःख देकर यहाँ सोने आये हो ? इस तरह सोना ही था तो यहाँ आने की क्या जरूरत थी ! घर पर ही आराम करते।'' इस प्रकार देर तक वे फटकारते रहे।

जब वे चुप हो गये तब रामदास ने काँपते हुए कहा : ''महाराज ! भूल हो गयी। क्षमा कर दें। अचानक नींद आ जाने के कारण ऐसी घटना हो गयी। भविष्य में सावधान रहूँगा।''

''जहाँ खड़े हो, वहीं एक घंटा खड़े रहो। अभी आग नहीं दूँगा।''

गुरुदेव के क्रोध से रामदास अच्छी तरह से परिचित थे, अतः आज्ञानुसार भयंकर सर्दी में बाहर खड़े काँपते रहे। कुछ देर बाद एक टुकड़ा कोयला बाहर फेंकते हुए गुरुदेव ने कहा : ''ले जाओ ! आगे से ऐसी गलती न हो।''

(क्रमशः) ☐
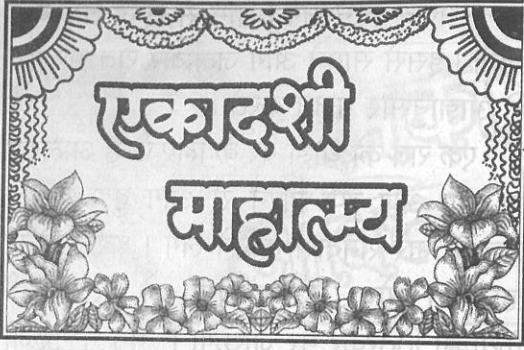
पुत्रदा एकादशी

[पुत्रदा एकादशी (भागवत) : ५ जनवरी]

युधिष्ठिर बोले : श्रीकृष्ण ! कृपा करके पौष मास के शुक्ल पक्ष की एकादशी का माहात्म्य बतलाइये। उसका नाम क्या है ? उसकी विधि क्या है ? उसमें किस देवता का पूजन किया जाता है ?

भगवान श्रीकृष्ण ने कहा : राजन् ! पौष मास के शुक्ल पक्ष की जो एकादशी है, उसका नाम 'पुत्रदा' है।

'पुत्रदा एकादशी' को नाम-मंत्रों का उच्चारण करके फलों के द्वारा श्रीहरि का पूजन करे। नारियल, सुपारी, बिजौरा नींबू, जमीरा (कागजी) नींबू, अनार, सुंदर आँवला, लौंग तथा बेर के फलों से एवं धूप-दीप से देवदेवेश्वर श्रीहरि की पूजा-अर्चना करनी चाहिए।

'पुत्रदा एकादशी' को विशेष रूप से दीपदान करने का विधान है। रात को वैष्णव पुरुषों (श्रद्धा-भक्तिभाववाले साधकों) के साथ जागरण करना चाहिए। जागरण करनेवाले को जिस फल की प्राप्ति होती है, वह हजारों वर्षों तक तपस्या करने से भी नहीं मिलता। यह सब पापों को हरनेवाली उत्तम तिथि है। चराचर जगतसहित समस्त त्रिलोकी में इससे बढ़कर दूसरी कोई तिथि नहीं है। समस्त कामनाओं तथा सिद्धियों के दाता भगवान नारायण इस तिथि के अधिदेवता हैं।

पूर्वकाल की बात है, भद्रावतीपुरी में राजा सुकेतुमान राज्य करते थे। उनकी रानी का नाम चम्पा था। राजा को बहुत समय तक कोई वंशधर पुत्र प्राप्त नहीं हुआ। इसलिए दोनों पति-पत्नी सदा चिंता और शोक में डूबे रहते थे। राजा के पितर उनके दिये हुए जल को शोकोच्छ्वास से गरम करके पीते थे। 'राजा के बाद और कोई ऐसा दिखाई नहीं देता, जो हम लोगों का तर्पण करेगा...' यह सोच-सोचकर पितर दुःखी रहते थे।

एक दिन राजा घोड़े पर सवार हो गहन वन में चले गये। पुरोहित आदि किसीको भी इस बात का पता न था। मृग और पक्षियों से सेवित उस सघन वन में राजा भ्रमण करने लगे। मार्ग में कहीं सियार की बोली सुनाई पड़ती थी तो कहीं उल्लुओं की। जहाँ-तहाँ भालू और मृग दृष्टिगोचर हो रहे थे। इस प्रकार घूम-घूमकर राजा वन की शोभा देख रहे थे, इतने में दोपहर हो गयी। राजा को भूख-प्यास सताने लगी। वे जल की खोज में इधर-उधर भटकने लगे। किसी पुण्य के प्रभाव से उन्हें एक उत्तम सरोवर दिखाई दिया, जिसके समीप मुनियों के बहुत-से आश्रम थे। शोभाशाली नरेश ने उन आश्रमों की ओर देखा। उस समय शुभ की सूचना देनेवाले शकुन होने लगे। राजा का दाहिना नेत्र और दाहिना हाथ फड़कने लगा, जो उत्तम फल की सूचना दे रहा था।

सरोवर के तट पर बहुत-से मुनि वेदपाठ कर रहे थे। उन्हें देखकर राजा को बड़ा हर्ष हुआ। वे घोड़े से उतरकर मुनियों के सामने खड़े हो गये और पृथक्-पृथक् उन सबकी वंदना करने लगे। वे मुनि उत्तम व्रत का पालन करनेवाले थे। जब राजा ने हाथ जोड़कर बारम्बार दण्डवत् किया, तब मुनि बोले : ''राजन् ! हम लोग तुम पर प्रसन्न हैं।''

राजा बोले : ''आप लोग कौन हैं ? आपके नाम क्या हैं तथा आप लोग यहाँ किसलिए एकत्रित हुए हैं ? कृपया यह सब बताइये ।''

मुनि बोले : ''राजन् ! हम लोग विश्वेदेव (चरित्रवान, सदाचारी, व्यसनमुक्त ब्राह्मण) हैं । यहाँ स्नान के लिए आये हैं । माघ मास निकट आ गया है । आज से पाँचवें दिन माघ का स्नान आरम्भ हो जायेगा । आज ही 'पुत्रदा' नाम की एकादशी है, जो व्रत करनेवाले मनुष्यों को पुत्र देती है ।''

राजा ने कहा : ''विश्वेदेवगण ! यदि आप लोग प्रसन्न हैं तो मुझे पुत्र दीजिये ।''

मुनि बोले : ''राजन् ! आज 'पुत्रदा' नाम की एकादशी है । इसका व्रत बहुत विख्यात है । तुम आज इस उत्तम व्रत का पालन करो । महाराज ! भगवान केशव के प्रसाद से तुम्हें पुत्र अवश्य प्राप्त होगा ।''

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं : युधिष्ठिर ! इस प्रकार उन मुनियों के कहने से राजा ने उक्त उत्तम व्रत का पालन किया । महर्षियों के उपदेश के अनुसार विधिपूर्वक 'पुत्रदा एकादशी' का अनुष्ठान किया । फिर द्वादशी को पारण करके मुनियों के चरणों में बारम्बार मस्तक झुकाकर राजा अपने घर आये । तदनंतर रानी ने गर्भधारण किया । प्रसवकाल आने पर पुण्यकर्मा राजा को तेजस्वी पुत्र प्राप्त हुआ, जिसने अपने गुणों से पिता को संतुष्ट कर दिया । वह प्रजा का पालक हुआ ।

इसलिए राजन् ! 'पुत्रदा' का उत्तम व्रत अवश्य करना चाहिए । मैंने लोगों के हित के लिए तुम्हारे सामने इसका वर्णन किया है । जो मनुष्य एकाग्रचित्त होकर 'पुत्रदा एकादशी' का व्रत करते हैं, वे इस लोक में पुत्र पाकर मृत्यु के पश्चात् स्वर्गगामी होते हैं । इस माहात्म्य को पढ़ने और सुनने से अग्निष्टोम यज्ञ का फल मिलता है ।

(पद्म पुराण, उ.खंड) ❐

भारतीय संस्कृति के आधारभूत तथ्य

धर्म के दस लक्षण : धृति, क्षमा, दम, अस्तेय, शौच, इन्द्रियनिग्रह, धी, विद्या, सत्य और अक्रोध ।

दस दिशाएँ : पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, आग्नेय, नैर्ऋत्य, वायव्य, ईशान, अधः, ऊर्ध्व ।

दस इन्द्रियाँ : पाँच कर्मेन्द्रियाँ (हाथ, पैर, जिह्वा, गुदा, जननेन्द्रिय), पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ (आँख, कान, नाक, जिह्वा, त्वचा) ।

दस महाविद्या : काली, तारा, छिन्न मस्ता, धूमावती, बगलामुखी, कमला, त्रिपुरभैरवी, भुवनेश्वरी, त्रिपुरसुंदरी और मातंगी ।

दश दिक्पाल : दसों दिशाओं की रक्षा करनेवाले दस देवता - पूर्व दिशा के इन्द्र, अग्नि कोण के अग्नि, दक्षिण दिशा के यम, नैर्ऋत्य कोण के नैर्ऋत्य, पश्चिम दिशा के वरुण, वायव्य कोण के मरुत, उत्तर दिशा के कुबेर, ईशान कोण के ईश, ऊर्ध्व दिशा के ब्रह्मा और अधः दिशा के रक्षक अनंत हैं ।

दशांग धूप : दस सुगंधियों के मेल से बननेवाला एक धूप जो पूजा में जलाया जाता है । ये दस द्रव्य हैं - शिलारस, गुग्गुल, चंदन, जटामांसी, लोबान, राल, खस, नख, भीमसैनी कपूर और कस्तूरी ।

दश मूल : सरिवन, पिठवन, छोटी कटाई, बड़ी कटाई, गोखरू, बेल, पाठा, गम्भारी, गनियारी (शमी के समान एक काँटेदार वृक्ष) और सोनपाठा - इन दस वृक्षों की जड़ें । ❐

जो आपके लिए बुरा सोचते हैं उनका भी भला करना, यह उदारता है । उदारात्मा बनो, किसी वस्तु को पकड़ मत रखो, किसी विचार को पकड़ मत रखो । बस एक... जिससे सब पकड़-पकड़कर छूट जाता है फिर भी जो कभी नहीं छूटता उस आत्मदेव का अनुसंधान करो । - पूज्य बापूजी

मन का चिंतन ऊँचा करो

- पूज्य बापूजी

एक होती है 'आधि', दूसरी होती है 'व्याधि'। मन के दुःखों को आधि बोलते हैं, शरीर के दुःखों को व्याधि बोलते हैं। जो आधि-व्याधि को सत्य मानता है और उनको अपने में थोपता है तो समझो वह अभी संसार का खिलौना है। मन में दुःख आये, चिंता आये तो बोले : 'मैं दुःखी हूँ, मैं चिंतित हूँ।' शरीर में रोग आये तो बोले : 'मैं रोगी हूँ। मेरे को यह है, मेरे को वह है।' अरे ! मन का चिंतन ऊँचा करो।

'श्री योगवासिष्ठ महारामायण' में आता है कि 'अंध कुएँ में गिरे हुए दीर्घतपा नाम के ऋषि को मानसिक यज्ञों से स्वर्ग प्राप्त हुआ। ऋषि दीर्घतपा अकस्मात् किसी अंधे कुएँ में गिर पड़े। वहाँ मन से ही उन्होंने यज्ञ किया। उससे इन्द्र प्रसन्न हुए। उन्हें कुएँ से निकालकर अपने लोक को ले गये। मनुष्य होते हुए भी इन्दु के पुत्रों ने पुरुषोद्योग से ध्यान द्वारा ब्रह्मा का पद प्राप्त किया। इस संसार में सावधान मनवाला कोई भी पुरुष स्वप्न में अथवा जाग्रत में कभी भी दोषों से जरा भी जड़ीभूत नहीं हुआ। इसलिए पुरुष इस संसार में पुरुष-प्रयत्न के साथ मन से ही मन को, अपने से ही अपने को पवित्र मार्ग में लगाये।'

आप अपने को मन से क्या सोचते हैं ? अपने को पंजाबी मानते हैं तो पंजाबी लगते हैं। हम अपने को जैसा मानते हैं, वैसे लगते हैं। 'मैं दुःखी हूँ, मैं सुखी हूँ, मेरी यह जाति है...' वास्तव में तो ये भी मान्यताएँ ही हैं। अपने को ब्रह्मस्वरूप माने तो ब्रह्म हो जायेगा। 'मैं शुद्ध-बुद्ध, शांत, चेतन आत्मा हूँ। सत् हूँ, चेतन हूँ, आनंदस्वरूप हूँ, ज्ञानस्वरूप हूँ।' जो असली है उसको माने तो असली स्वरूप प्रकट हो जायेगा।

संकर सहज सरूपु सम्हारा।
लागि समाधि अखंड अपारा ॥

शिवजी कहते हैं कि 'सती जाती है तो जाय। उसके मन की करे।' मन के अनुकूल होता है तो सुख होता है और मन के प्रतिकूल होता है तो दुःख होता है। दुःखी-सुखी क्यों होना !

मन की मूढ़ता से ही जगत भासता है। रागबुद्धि, द्वेषबुद्धि जीव को संसार में भटकाती है और ब्रह्मबुद्धि जीव को अपने ब्रह्मस्वभाव में जगा देती है।

'बेटा नहीं है, बेटा नहीं है।' बेटे की इच्छा करके दुःखी होना है तो दुःखी हो ! ऐसी भी कई माइयाँ हैं, कहती हैं कि 'अच्छा है जो हम संसार की झंझट में नहीं पड़ीं। हमको संतान ही नहीं ! संतानवालों को अपनी संतानों को सँभालना पड़ता है, अपन तो ऐसे ही भले', तो उनको दुःख नहीं होता।

जैसे केसरी सिंह बल करके पिंजरे से निकल आता है, ऐसे ही बल करके मन की दुःखद और सुखद वासनाओं, कल्पनाओं से बाहर निकल जाओ। ॐ का जप करो फिर शांत हो जाओ। जितनी देर जप करो उतनी देर शांत हो जाओ।

वसिष्ठजी कहते हैं : 'हे रामजी ! मूढ़ जीव पशुवत् विषयरूपी कीच में फँसे हैं और उससे बड़ी आपदा को प्राप्त होते हैं। उन मूढ़ों को आपदा में देख के पाषाण भी रुदन करते हैं।'

जो कीट बने हैं, पतंग बने हैं, कृमि बने हैं वे भी कभी मनुष्य थे और जो इन्द्र बने हैं, देवताओं से सम्मानित होते हैं, वे भी कभी मनुष्य थे। उन्होंने इन्द्र बनने की भावना से यज्ञ-याग, संयम किया तो इन्द्र बन गये और जो आये वह खाये, मन में आये वैसा करने लगे तो नीच-से-नीच

गति को चले जाते हैं। इसलिए शास्त्र, महापुरुषों व धर्म के अनुरूप मन को ऊर्ध्वगामी किया जाता है। मन में जो आये ऐसा करने लग गये तो मन अधोगामी हो जाता है। ऐसों को देखकर, ऐसों के संग से भी बड़ा बुरा हाल होता है। उनके वचनरूपी वायु से राख उड़ती है जो आँखों को धूमिल कर देती है। वैराग्य-बुद्धि को नष्ट कर देती है। विवेक को नष्ट कर देती है।

'यह चाहिए, वह चाहिए...', अपने अंतरात्मा के सुख में आना है कि 'यह चाहिए, वह चाहिए...' 'यह देखूँ, वह करूँ, यह पढ़ूँ, यह प्रमाणपत्र ले लूँ...' तो फिर भटको संसार में! संत कबीरजी ने कहा :

भलो भयो गँवार, जाहि न व्यापी जग की माया।

अच्छा है अनपढ़ है, ईश्वर में प्रीति तो है, जगत की माया से तो बच गया! पढ़-पढ़ के भी संसार की ही वासना हुई तो और जन्मेगा-मरेगा। कितना भी देखे, कितना भी घूमे, कितने भी प्रमाणपत्र ले ले, क्या करेगा? आखिर तो मौत ठिकाना है।

कब सुमिरोगे भगवान को? भगवत्सुख कब लोगे? भगवत्-आनंद कब लोगे? भगवन्माधुर्य कब लोगे? 'मन की चाल को देखनेवाला मैं साक्षी हूँ' - ऐसा ज्ञान कब लोगे? ऐसे तो कीट-पतंग, सुअर भी खाते-पीते हैं, मजा करते रहते हैं। दिखता है मजा पर देखो कि सुअर की क्या जिंदगी है! बाल-बच्चे तो उसको भी हैं, बकरे को भी हैं। कुत्ते को भी कुतिया है तो क्या हो गया! आयुष्य तो नष्ट हो रहा है।

आत्मा चैतन्य है, ज्ञानस्वरूप है, अमर है, सुखस्वरूप है। दुःख आया तो मन के साथ जुड़ो नहीं। दुःख आया है तो मन में आया है। काहे को दुःखी होना! भूतकाल को याद करके काहे को तप मरना! भविष्य की चिंताएँ कर-करके काहे को परेशान होना! वर्तमान में भगवदाकार, ब्रह्माकार भाव में मस्त रहें।

वसिष्ठजी कहते हैं : 'हे रामजी! जैसे पिता बालक को अनुग्रह करके समझाता है, वैसे ही मैं भी तुमको समझाता हूँ।'

जैसे पिता बच्चे को समझाता है, वैसे ही गुरु अनुग्रह करके शिष्य को समझाते हैं। गुरु के अनुभव से अपना मन मिलाना चाहिए। नहीं तो मूढ़ों के सम्पर्क में आओगे तो पाषाण भी रुदन करते हैं। वासना तो सबके मन में होती है, यदि वासना के अनुसार मिल जाता है तो फिर दूसरी वासना, तीसरी वासना बढ़ती है। वासना के अनुसार नहीं होता है तो दुःख होता है। तो अब वासना कैसे मिटे?

वासना के पेट में भगवान की माँग डाल दो। भगवान की माँग होगी तो वासना का पेट फाड़कर भगवान का सुख प्रकट हो जायेगा। वासना के पेट में भगवत्प्राप्ति का भाव डाल दो। कभी वासना उठे कि 'यह चाहिए, वह चाहिए' तो बोलो : 'नहीं, पहले मुझे ईश्वर चाहिए।'

बोले : 'मैं पढ़ लूँ?'

'ठीक है, बेशक पढ़ना लेकिन पहले ईश्वरप्राप्ति कर लो।'

'मैं यह कर लूँ, मैं वह कर लूँ?'

'सब करना लेकिन पहले ईश्वरप्राप्ति कर लो, फिर यह सब आसानी से हो जायेगा।' सोचे, 'और सब कर लूँ, फिर भगवान को पाऊँगा' तो भटकेगा, कुछ नहीं मिलेगा। यह भी जायेगा, वह भी जायेगा।

अतो भ्रष्टः ततो भ्रष्टः।

इसलिए पहले भगवत्प्राप्ति करो।

श्रीरामजी कहते हैं : 'हे मुनीश्वर! जैसे आकाश में वन होना आश्चर्य है, वैसे ही युवावस्था में वैराग्य, विचार, शांति और संतोष होना भी बड़ा आश्चर्य है।'

जवानी में काम-विकार से बचना, संसार की इच्छा-वासना से बचना ही भगवान की कृपा है। ॐ आनंद ॐ... कोई भी इच्छा आये तो कह दो, 'पहले ईश्वरप्राप्ति हो जाय फिर। पहले ईश्वर से, अपने आत्मदेव से मिल लें फिर देखा जायेगा।' ❑

बुद्धियोगी की विजय

(पूज्य बापूजी की पावन अमृतवाणी)

छीतस्वामी मथुरा में बड़े मशहूर हो गये । उनका जन्म पंडे के घर हुआ था । बालक ज्यों-ज्यों बड़ा हुआ त्यों-त्यों लफंगे-लोफर छोकरों से उसकी दोस्ती होती गयी । उनके साथ कहीं भी किसीको भी सताना, मारपीट करना, हल्ला बुलवाना उसको अच्छा लगता था । ऐसा करते-करते उसकी उम्र लगभग २० वर्ष की हुई ।

गोकुल में उस समय गोसाईं विट्ठलदास महाराज थे । उनकी बड़ी ख्याति थी । वे बड़े ऊँचे आत्मा थे । 'अंतर्यामी परमात्मा ही अपना आत्मा है' - ऐसी ऊँची समझ के धनी थे । 'मंदिर में भगवान हैं, मस्जिद में अल्लाह है' - ये सब बालमंदिर की बातें हैं । अंतरात्मा ही भगवान है । 'भ' 'ग' 'वा' 'न'... 'भ' - जिसकी सत्ता से भरण-पोषण होता है, 'ग'- जिसकी सत्ता से गमनागमन होता है, 'वा' - जिसकी सत्ता से वाणी चलती है, 'न' - यह सब न होने के बाद भी जो साथ नहीं छोड़ता वह अंतरात्मा-परमात्मा ही भगवान है । - ऐसी समझ के धनी गोसाईं विट्ठलदासजी की महिमा सुनी उस २० वर्ष के विद्यार्थी ने । उसने सोचा, 'चलो गोकुल चलें, उन प्रसिद्ध विट्ठलदास महाराज को जरा सतायें ।' कुछ खोटे सिक्के और एक खराब, सड़ा-गला नारियल लिया । विट्ठलस्वामी के चरणों में खोटे सिक्के रखे, सड़ा नारियल रखा और प्रणाम करके बोला : ''बाबाजी ! आशीर्वाद दीजिये ।'' उसने सोचा, 'देखें अब बाबाजी क्या कहते हैं ? उस पर, फिर इनका मखौल उड़ायेंगे ।'

बाबा ने कहा : ''बेटे ! तुमने तो आज बड़ी भारी दक्षिणा रखी । मैं तो बड़ा प्रसन्न हूँ तुम पर ।''

आये थे बाबा को नाराज करने के लिए, विक्षिप्त करने के लिए ताकि बाबा डंडा उठायें, मारपीट करें और हम हल्ला बोलें । लेकिन बाबा ने उनको परास्त कर दिया ।

बाबा बोले : ''तुम पर मैं बहुत खुश हूँ । तुमने ये खोटे सिक्के रखे हैं, क्या समझ है तुम्हारी कि यह संसार खोटा है ! इस खोटे संसार में नहीं फँसो और नारियल रखा है कि संसार की सभी वस्तुएँ समय पाकर जैसे नारियल पड़ा-पड़ा सड़-गल गया, उसके पानी से बदबू आ रही है, वैसे ही अन्न, भोजन, दही, दूध पड़ा-पड़ा सड़ता है, गलता है, दुर्गंध फेंकता है । चाहे आम हो पड़े-पड़े सब सड़ता है । जो पड़े-पड़े सड़ जाय उस खुराक से बना हुआ शरीर भी पड़े-पड़े सड़ता है, मुर्दा भी सड़ता है, गलता है । जिंदे को भी नहलाओ-धुलाओ, नहीं तो दूसरे दिन उसके नजदीक खड़े रहो तो बदबू आयेगी । बेटे ! तुमने बहुत ऊँची दक्षिणा रखी । मैं आशीर्वाद क्या दूँ, मैं तो अपना दिल दे रहा हूँ तेरे को यार ! बेटा ! तेरा मंगल हो । तूने मेरे को विवेक भी दे दिया, वैराग्य भी दे दिया ।''

वह उद्दण्ड लड़का महाराज को तो क्या उद्विग्न करे, चरणों में गिर पड़ा और केवल चरणों में नहीं गिरा बल्कि बोला : ''बाबा ! अपना मखौल, मजाक उड़ानेवाला और अपने को सतानेवाला व्यक्ति आया है, यह समझकर भी आप सताये नहीं गये, अपितु सतानेवाले को आपने ऐसी सीख दी कि मुझे लगता है मेरा जीवन धन्य है ! मुझे अब आप अपना चेला बनाओ, अपनी शरण में रखो ।''

बाद में वही युवक छीतस्वामी बने । वे गये तो थे विट्ठलदासजी महाराज को उद्विग्न करने के लिए लेकिन महाराज इतने प्रसन्न हुए कि विजय हो गयी बुद्धियोगी की !

कोई हमें परेशान करना चाहे और हम परेशान

हो जायें तो उसकी तो विजय हो गयी, हमारी पराजय हो गयी। वह कितनी भी परेशानी दे और हम उसे लौटाकर सुख-शांति और माधुर्य दें तो परेशानी देनेवाले व्यक्ति की हार होगी।

'मैं परेशानी का साक्षी हूँ। तुम कितना भी परेशान करो, मैं परेशानी को देखनेवाला हूँ। दुःख को देखनेवाला हूँ।' मूर्ख लोग मन में दुःख आता है तो बोलते हैं : 'मैं दुःखी हूँ।' शरीर में बीमारी आती है तो निगुरे बोलते हैं : 'मैं बीमार हूँ।' चित्त में चिंता आती है तो निगुरे बोलते हैं : 'मैं चिंतित हूँ।' अरे तुम चिंता को देखनेवाले हो लाला! लालियाँ! दुःख मन में आया उसको तुम देखनेवाले हो, बीमारी शरीर में आयी उसको तुम देखनेवाले हो।

हम हैं अपने-आप, हर परिस्थिति के बाप !

'ॐस्वरूप अंतरात्मा मेरा परमात्मा है। मैं उसका, वह मेरा। हरि ॐ... ॐ...'

इसलिए आप मन को ऐसा समझाइये कि चाहे बाहर कितने भी परेशान करनेवाले प्रसंग आयें लेकिन आपके दिल में कोई फरियाद न उठे। आप भीतर से ऐसे पुष्ट हों कि बाहर की छोटी-मोटी मुसीबतें आपको परेशान न कर सकें। अपने को सजाना है, अपने को बनाना है, मारपीटकर दुनिया को सुधारना नहीं है। अपने को सजाओ सत्संग से, सहानुभूति से, सद्भाव से, ईश्वर-आरूढ़ वृत्ति से। ☐

व्रत, पर्व और त्यौहार

२१ दिसम्बर : सफला एकादशी

२५ दिसम्बर : महामना मदनमोहन मालवीय जयंती

५ जनवरी : गुरु गोविंदसिंह जयंती (दिनांक अनु.)

८ जनवरी : चतुर्दशी-आर्द्रा नक्षत्र योग (प्रातः ३-५५ से दोप.१२-४७ तक) (ॐकार का जप अक्षय फलदायी)

१४ जनवरी : मकर संक्रांति, उत्तरायण

१५ जनवरी : मकर संक्रांति (पुण्यकाल : सूर्योदय से सूर्यास्त), रविवारी सप्तमी (सूर्योदय से रात्रि ३-३९ तक)

१९ जनवरी : षट्‌तिला एकादशी

मकरासन

'मकर' अर्थात् मगरमच्छ। इस आसन में शरीर की आकृति मगरमच्छ जैसी लगती है इसलिए इस आसन को 'मकरासन' कहते हैं। इसे विभिन्न प्रकार से किया जाता है।

सभी विधियों के सामूहिक लाभ : शारीरिक थकावट दूर होकर सभी अंगों को आराम मिलता है। मानसिक विश्राम भी मिलता है। श्वास की बीमारी का निवारण होता है। दमा तथा फेफड़े के रोग नष्ट होते हैं। जिन्हें रीढ़ की हड्डी की शिकायत हो, उन्हें यह आसन लम्बे समय तक करना चाहिए। इस आसन के अभ्यास से रक्ताभिसरण का कार्य बड़ा सुगम हो जाता है। क्षय रोग में बहुत लाभ होता है।

पहली विधि :

जमीन पर पेट के बल लेट जायें। ललाट जमीन से लगा दें। दोनों हाथों को सिर की तरफ सीधा फैलाकर हथेली एक-दूसरे के ऊपर रख दें। दोनों पैर पीछे की ओर सीधे रहें तथा पैरों के पंजों का ऊपरी सिरा जमीन से लगा रहे।
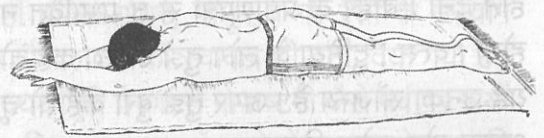
पहली विधि के लाभ : प्राण की गति धीमी होने से साधना में लाभदायक है। मन में नम्रता का भाव अधिक उत्पन्न होता है। (क्रमशः) ☐

ध्यान-योग शिविर की पूर्णाहुति के समय अंतरंग साधकों को

पूज्य बापूजी का समाधि भाषा का संकेत

(अंक २२६ से आगे)

गुरुदेव की वात्सल्यमयी वाणी शिष्य के हृदय में गूँज उठी : हे वत्स ! हे भैया ! तू हरदम याद रखना कि तेरा लक्ष्य आत्मसाक्षात्कार है। जिस पद में भगवान साम्ब सदाशिव विश्रांति पाते हैं, जिस पद में भगवान आदिनारायण योगनिद्रा में आराम फरमाते हैं, जिस चिद्घन परमात्मा की सत्ता से ब्रह्माजी सृष्टि-सर्जन का संकल्प करते हैं, वह शुद्ध आत्मस्वरूप तेरा लक्ष्य है।

निद्रा के समय अचेतन अवस्था में, सुषुप्त अवस्था में जाने से पहले उसी लक्ष्य को याद करके फिर सोना। जब वह सुषुप्त अवस्था, निद्रा की अवस्था, अचेतन अवस्था पूरी हो तब तू छलाँग मारकर सचेतन अवस्था में से परम चेतन अवस्था में प्रवेश करना। हे साधक ! अपनी दिव्य साधना को ही, अपने निजी अनुभव को ही प्रमाणभूत होने देना। बाहर के प्रमाणपत्रों से तू प्रभावित न होना। वत्स ! दुनिया के लोग तुझे अच्छा कहें तो यह उनका सौजन्य है। अगर तुझे बुरा कहें तो तू अपना दोष खोज निकालना। पर याद रखना : तमाम निंदा और प्रशंसा केवल इन्द्रियों का धोखा है, सत्य नहीं है। मान-अपमान सत्य नहीं है। जीवन-मृत्यु सत्य नहीं है। अपना और पराया सत्य नहीं है। हे साधक ! सत्य तो तू स्वयं है। अपने-आपमें ही, अपने आत्मस्वरूप में ही तू प्रतिष्ठित होना।

हे वत्स ! देहाध्यास को पिघलने देना। सचेतन-अचेतन अवस्थाओं को तू खेल समझना। ये अवस्थाएँ जहाँ से शक्ति लाती हैं, जहाँ से ज्ञान लाती हैं, जहाँ से आनंद व उल्लास लाती हैं, प्रेम का प्रसाद लाती हैं, उस परम चैतन्य परमात्मा का प्रसाद पाने के लिए ही तेरा जन्म हुआ है।

प्यारे ! तू अपने को भाई या बहन, स्त्री या पुरुष, माँ या बाप नहीं मानना। गुरु ने तुझे 'साधक' नाम दिया है तो उस नाम को सार्थक करते हुए अपने साध्य को पाने के लिए सदा जागृत रहना। सब नाम और गाँव देहरूपी चोले के लिए हैं। जब से तू संत की शरण में पहुँचा है, सद्गुरु के चरणों में पहुँचा है तब से तू साधक बना है। अब साध्य को हासिल करके तू सिद्ध बन जा।

चातक मीन पतंग जब पिय बिन नहिं रह पाय।
साध्य को पाये बिना साधक क्यों रह जाय॥

तमाम निंदा-स्तुति को तू मिथ्या समझना। तमाम मान-अपमान के प्रसंगों को तू खेल समझना। तू अपने शुद्ध चेतन स्वभाव में प्रतिष्ठित होना। प्यारे ! अगर इतनी सेवा तूने कर ली तो गुरुदेव परम प्रसन्न होंगे। गुरु की सेवा करना चाहता है तो गुरु का ज्ञान पचाने की दृढ़ता ला।

शठ गुरु मिले वह यूँ कहे कछु लाय और मोहे दे।
सद्गुरु मिले वह यूँ कहे नाम धणी का ले॥

स्वरूप सँभाल ले...

हे साधक ! तू अपने स्वरूप को पा ले... अपने आत्मस्वरूप में जाग जा। अपने निज अधिकार को तू सँभाल ले। पंचभौतिक देहों में से कई जन्मों तक गुजरता आया है। प्यारे ! कब तक माया के थप्पड़ खाता रहेगा ? कब तक माताओं के गर्भ में लटकेगा ? कब तक पिताओं के शरीर से गुजरता रहेगा ? (क्रमशः) ❑

गाय की सेवा स्वयं की सेवा है

मानव और गाय का ऐसा संबंध है जैसे शरीर और प्राणों का। यह एक आत्मीय संबंध है। गाय मनुष्यमात्र की माता है। विश्व में गाय है तो सात्त्विक प्राण, सात्त्विक मति और दीर्घ आयु भी सुलभ है। गाय मानवीय प्रकृति से जितनी मिलजुल जाती है, उतना और कोई पशु नहीं मिल पाता। गाय जितनी प्रसन्न होती है, उतने ही उसके दूध में विटामिन अधिक मात्रा में उत्पन्न होते हैं और गाय जितनी दुःखी होती है, उतना ही दूध कम गुणोंवाला होता है।

गाय ने मानव-बुद्धि की रक्षा की है। आज भ्रष्टाचार, बेईमानी बढ़ती जा रही है। इसका कारण है बुद्धि सात्त्विक नहीं है। वह सात्त्विक क्यों नहीं है ? क्योंकि तन-मन सात्त्विक नहीं हैं। इनमें सात्त्विकता का अभाव सात्त्विक आहार न लेने के कारण है। और सात्त्विक आहार का अभाव गो-रसों का त्याग करने से हुआ है। गाय का दूध, घी, मक्खन, छाछ आदि परम सात्त्विक आहार हैं।

गौ-रक्षा के लिए समाज व राज्य क्या करता है, लोग मदद करते हैं कि नहीं, ये गौण बातें हैं। मुख्य बात यह है कि गाय की दयनीय अवस्था देखकर अपने दिल में पीड़ा होती है कि नहीं ? गाय की रक्षा होती है तभी प्रकृति भी अनुकूल होती है और भूमि भी अनुकूल होकर स्वयं रस देने लगती है। जैसे-जैसे आप लोग गौसेवा करते जायेंगे, वैसे-वैसे आपको यह अनुभव होता जायेगा कि आप गाय की सेवा नहीं बल्कि गाय आपकी सेवा कर रही है, स्वास्थ्य की दृष्टि से, बौद्धिक दृष्टि से, हरेक दृष्टि से। गायें हमारी कितने-कितने प्रकार से सेवा कर सकती हैं, इसका प्रमाण है कल्याण पत्रिका में छपी यह सत्य-घटना :

सन् १९४४ में अजमेर (राज.) के गाँव मझेवला में गुमानसिंह नाम का एक युवक गायें चराता था।

एक दिन वह पहाड़ी पर बैठा हुआ शिखर की तरफ पीठ करके गायों को चरा रहा था। अचानक एक नरभक्षी लकड़बग्घे ने शिखर से छलाँग लगाकर गुमानसिंह पर आक्रमण कर दिया। गुमानसिंह उसे देखकर भयभीत हो गया। तभी घास चर रही गायों में से लगभग १०-१५ गायों ने अपने रखवाले गुमानसिंह के चारों ओर घेरा बनाकर उसको बीच में कर लिया। वे पूँछ ऊपर कर हुंकार भरने लगीं, अपने पैने सींगों से लकड़बग्घे को मारने दौड़ने लगीं। इससे वह डरकर भाग गया।

जब ग्वाला गायों को गाँव ले के चलने लगा तो उस दिन वह गायों का रखवाला नहीं था बल्कि गायें ही उसके रक्षक के रूप में साथ में चल रही थीं। गुमानसिंह ने जब इस घटना की जानकारी गाँववालों को दी तो वे सुनकर दंग रह गये। गायों के प्रति उनका प्रेम उमड़ पड़ा। 'कैसी समझदारी है और कैसा अपनापन है !' - यह सोचकर उनका दिल भर आया।

पूज्य बापूजी भी गौसेवा को बहुत महत्त्व देते हैं। पूज्यश्री ने कत्लखाने ले जायी जा रही हजारों गायों को आश्रय देकर गौशालाएँ चलायीं। आज गौशाला में उन गायों का पालन-पोषण, संरक्षण, संवर्धन किया जा रहा है लेकिन कोई चंदा लेकर नहीं बल्कि गोबर, गोमूत्र व गो-रसों के उपयोग से गौशालाओं को स्वावलम्बी बना दिया गया है। पूज्यश्री की प्रेरणा से गोपाष्टमी जैसे पर्व पर गायों के लिए देश भर में अनेकों जगह गोग्रास की व्यवस्था करायी जाती है। बापूजी ने गौसेवा का केवल उपदेश नहीं दिया वरन् प्रत्यक्ष रूप से समाज के सामने उदाहरण रखा है। ❐

क्या करें, क्या न करें ?

(भगवत्पाद श्री लीलाशाहजी महाराज की अमृतवाणी)

किन बातों से बचें ?

१. भोग : भोगों में रोगों का भय रहता ही रहता है। भोग भोगने का नतीजा रोग ही होता है। भोग बुरी बला है। भोग भोगने के बाद चित्त कभी तृप्त नहीं होता है, सदैव व्याकुल रहता है। भोगों का सुख अतृप्ति पैदा करनेवाला होता है, दिल चाहता है कि बार-बार भोगूँ, इसलिए मन की शांति नहीं रहती है। जैसे अग्नि में घी डालने से वह उग्र रूप धारण कर लेती है, वैसे ही भोग भी हैं। भोग भोगने से थोड़ी प्रसन्नता व तृप्ति होती है परंतु फिर बार-बार उसकी तृष्णारूपी अग्नि भड़कने लगती है। वह मनुष्य को जलाकर कमजोर व बरबाद करती रहती है। वह बहुत दुःखदायी है। मनुष्य को सदैव अपना गुलाम बनाकर रखना चाहती है। इसलिए सदैव सावधान रहना चाहिए।

२. तृष्णा : तृष्णा क्या है ? पहले साधारण इच्छा पैदा होती है, फिर वह बढ़कर तृष्णा बन जाती है। तृष्णा पैदा होने से प्रमाद व पाप आकर उसका साथ देते हैं। फिर तो मनुष्य अपनी सुध-बुध खोकर, अंधा बन के मन के वश में हो जाता है। फिर वह हाथी की तरह गहरे खड्डे में गिर जाता है, जहाँ से निकलना मुश्किल हो जाता है। तृष्णा के साथ चिंता भी आकर उसे घेर लेती है। तृष्णावाले इन्सान के हृदय में दुःख भी आकर निवास करते हैं। वह दूसरों को कष्ट पहुँचाकर स्वयं सुखी होने का यत्न करता है तथा इस प्रकार अपना जीवन व्यर्थ ही दुःख में व्यतीत करता है।

३. कुसंग : जैसे धुआँ मकान को काला कर देता है, वैसे ही बुरा इन्सान अपने संग से अच्छे इन्सान को बुरा बना देता है। सिंधी में कहावत है : **'संग तारे कुसंग बोड़े'** - अच्छे संग से इन्सान संसार-सागर से तर जाता है परंतु कुसंग से डूब जाता है। यह सत्य भी है। जैसे घरतेरी नामक जंतु छोटे कीट को फँसाकर अपने घर में लाकर बंद रखता है तो थोड़े दिनों में कीट भी उसके जैसा बन जाता है। कीट हरे रंगवाली बेल पर बैठता है तो उसके प्रभाव से आखिर हरा बन जाता है। इसी प्रकार दुष्ट का संग करने से मन मलिन होता है। नीच लोगों की संगत करने से तो मरना बेहतर है।

क्या करें ?

१. पीठ दिखाओ : समुद्र की भाँति अति गम्भीर बनकर रहें। समुद्र को पानी की कोई इच्छा नहीं रहती है, फिर भी नदियाँ अपने-आप आकर उसमें प्रवेश करती हैं। तुम भी समुद्र की भाँति बनो, किसीके भी आगे हाथ मत फैलाओ। सत्पुरुषों के पीछे धन अपने-आप घूमता रहता है। परछाईं की ओर दौड़ते हैं तो वह हाथ नहीं आती, आगे बढ़ती जाती है परंतु जब उसे पीठ देते हैं तब अपने-आप पीछे-पीछे भागती है। इसी प्रकार जो भोगों से दूर रहता है, माया स्वयं उसके पीछे दौड़ती रहती है।

२. सच्ची शक्ति : हमें यह समझना चाहिए कि जो महान शक्ति सूरज, चाँद व तारों को प्रकाशमान कर रही है, वह हम स्वयं हैं। अपने वास्तविक स्वरूप को पहचानें। अपनी शान का, अनादि ज्योति का विचार करें, सच्ची खूबसूरती का ध्यान करें तथा अपने तुच्छ शरीर के संबंध इस प्रकार भुला दें, मानो वे थे ही नहीं। न ही मृत्यु है, न बीमारी और न ही दूसरी कोई तकलीफ। हर हाल में खुश, आनंद व शांति से

भरपूर रहना चाहिए।

३. दर्शन : बुदबुदा जल का ही रूप है। बुदबुदे को सागर का दर्शन तब होगा, जब वह अपना वजूद नष्ट करेगा। अगर अपना वजूद छोड़ेगा तो बुदबुदा व सागर एक हो जायेंगे। लहरें व बुदबुदे मिलकर सागर के पास दर्शन हेतु गये और बोले : ''सागर देवता ! हमें अपना दर्शन कराओ।'' सागर ने कहा : ''अरे मूर्खो ! तुम मुझसे अलग कैसे हो ? तुम स्वयं सागर हो, स्वयं को अलग क्यों समझ रहे हो ? तुम लोग तो मेरी जान हो।'' इसी प्रकार मनुष्य भी अपने-आपको भूल बैठा है, नहीं तो वह स्वयं परमात्मा है।

साधु कौन ?

साधु वह है जो अपने कर्तव्य का पालन करे, जिसके आचरण में समानता हो। कहे एक तथा करे दूसरा, वह साधु नहीं हो सकता। जो मनुष्य अनेक प्रकार की कथाएँ सुनता या कथन करता है, परंतु उन पर अमल नहीं करता, वह बड़ा मूर्ख कहलाता है। जिसमें दैवी गुण नहीं हैं, वह साधु कैसे कहलायेगा ! कागज पर चाहे सौ बार अग्नि का चित्र बना लो, फिर भी वह कागज को जला नहीं सकती। वैसे ही अमल किये बिना ज्ञान इन्सान को क्या लाभ पहुँचा सकता है ! □

जन्मदिवस बधाई गीत

बधाई हो बधाई, शुभ दिन की बधाई।
बधाई हो बधाई, जन्मदिवस की बधाई॥
जन्मदिवस पर देते हैं, तुमको हम बधाई,
जीवन का हर इक लमहा, हो तुमको सुखदाई।
धरती सुखदाई, हो अम्बर सुखदाई,
जल सुखदाई, हो पवन सुखदाई। बधाई...

मंगलमय दीप जलाओ, उजियारा जग फैलाओ।
उद्यम पुरुषार्थ जगाकर, आत्मपद अपना पाओ।
हो शतंजीव तुम चिरंजीव, शुभ घड़ी आज आई॥
माता सुखदाई, हो पिता सुखदाई,
बंधु सुखदाई, हो सखा सुखदाई। बधाई...

सद्गुण की खान बने तू, इतना महान बने तू।
हर कोई चाहे तुझको, ऐसा इन्सान बने तू।
बलवान हो तू महान हो, करे गर्व तुझ पे अब हम॥
दर्शन सुखदाई, हो सुमिरन सुखदाई,
तन मन सुखदाई, हो जीवन सुखदाई। बधाई...

ऋषियों का वंशज है तू, ईश्वर का अंशज है तू।
तुझमें हैं चंदा और तारे, तुझमें ही सर्जनहारे।
तू जान ले पहचान ले, निज शुद्ध बुद्ध आतम॥
ईश्वर सुखदाई, ऋषिवर सुखदाई,
सुमति सुखदाई, हो सत्ज्ञान सुखदाई। बधाई...

आनंदमय जीवन तेरा, खुशियों का हो सवेरा।
चमके तू बन के सूरज, हर पल हो दूर अँधेरा।
तू ज्ञान का भंडार है, रखना तू धैर्य, संयम॥
ग्रह सुखदाई, हो गगन सुखदाई,
जल सुखदाई, हो अगन सुखदाई। बधाई...

तुझमें ना जीना मरना, जग है केवल एक सपना।
परमेश्वर है तेरा अपना, निष्ठा तू ऐसी रखना।
तू ध्यान कर निज स्वरूप का, तू सृष्टि का है उद्गम॥
मंजिल सुखदाई, हो सफर सुखदाई,
सब कुछ सुखदाई, हो बधाई हो बधाई। बधाई...

बधाई हो बधाई, शुभ दिन की बधाई।
बधाई हो बधाई, जन्मदिवस की बधाई॥
जल, थल, पवन, अगन और अम्बर,
हो तुमको सुखदाई।
गम की धूप लगे ना तुझको, देते हम दुहाई॥
ईश्वर सुखदाई, ऋषिवर सुखदाई,
सुमति सुखदाई, हो सत्ज्ञान सुखदाई। बधाई...

(आश्रम से प्रकाशित 'बाल भजनमाला' पुस्तक से)

शीत ऋतु विशेष

शीत वातावरण के कारण जब जठराग्नि अत्यंत तीव्र हो जाती है, तब शरीर को विशेष पौष्टिक पदार्थों की आवश्यकता होती है जो वर्ष भर के लिए शरीर में शक्ति का संचय कर सकें। इस समय अपनी आयु, प्रकृति व उपलब्धता के अनुसार स्निग्ध, मधुर व बलवर्धक पदार्थों का सेवन करना चाहिए। युवा, वृद्ध व महिलाओं के लिए ऐसे पदार्थों का वर्णन नीचे किया गया है :

✻ रग-रग में शक्ति-संचार करनेवाला : ममरी बादाम की छिलकारहित ३ से ५ गिरी व मिश्री १२ ग्राम दोनों को अत्यंत बारीक पीसकर २५० ग्राम गाय के दूध में मिला के दूध को एक उबाल देकर उतार लें। फिर इसे खूब उलटें-पलटें, जिससे इसमें झाग उत्पन्न हो जाय और इसमें इतनी गर्मी रह जाय जितनी दूध दुहने पर रहती है। इसे पी लें। यह दूध रग-रग में शक्ति का संचार कर देता है और यौवन को देर तक स्थिर रखता है। यदि इसे व्यायाम करने के ३० मिनट पश्चात् पिया जाय तो सोने पर सुहागे का काम करता है।

✻ शक्ति का भण्डार : अश्वगंधा, शतावरी, विधारा, मुलेठी और विदारीकंद पाँचों को समान मात्रा में लेकर चूर्ण बना के मिश्रित करके रख लें। सुबह-शाम गोदुग्ध व पानी दोनों समान मात्रा में लेकर उसमें २-३ ग्राम चूर्ण डाल के उबालें। दूध शेष रहने पर पियें। इसके सेवन से वृद्धों में भी युवकों जैसी शक्ति आ जाती है।

✻ पुष्टिदायक प्रयोग : रात्रि में ७०-८० ग्राम गेहूँ पानी में भिगो दें। प्रातः उन्हें पीस-छानकर उनका दूध निकाल लें। आधा लीटर पानी उबालें। जब उफान आये तब गेहूँ के दूध को धीरे-धीरे उबलते हुए पानी में मिलायें। थोड़ी देर उबालने के बाद इसमें दूध व स्वादानुसार मिश्री मिला के सेवन करें। ऐसा सात दिन तक करने से शरीर में उत्पन्न दाहकता (गर्मी) शांत हो जाती है। मूत्राशय-संबंधी अनेक रोगों से भी मुक्ति मिल जाती है। यह एक पुष्टिदायक प्रयोग भी है। इससे हड्डियाँ मजबूत बनती हैं।

✻ यौवनदाता : १०-१५ ग्राम गाय के घी के साथ २५ ग्राम आँवले का चूर्ण, ५ ग्राम शहद तथा १० ग्राम तिल का तेल मिलाकर प्रातः सेवन करने से दीर्घकाल तक युवावस्था बनी रहती है।

महिला-मित्र पाक

लाभ : शीतकाल में नियमित रूप से दो माह तक इसका सेवन करने से शरीर पुष्ट, सबल, चेहरा उज्ज्वल व कांतिपूर्ण होता है। वातजन्य विकार जैसे - कमर में दर्द, कम्पन, श्वेत प्रदर, दुर्बलता, प्रसूताओं में दूध की कमी, खून की कमी, हड्डियों की कमजोरी दूर हो जाती है। गर्भवती महिला यदि २-३ माह इस पाक का सेवन करे तो गर्भस्थ शिशु का विकास बढ़िया होगा।

सामग्री : असली सफेद मूसली, शतावरी व चोपचीनी चूर्ण प्रत्येक ५० ग्राम, सालमपंजा, सेमल कंद, गोखरू, अश्वगंधा, सोंठ व निर्गुण्डी के बीज का चूर्ण प्रत्येक २५ ग्राम, पीपल चूर्ण १० ग्राम, बला के बीज २५ ग्राम, चिरौंजी ५० ग्राम, बादाम, मगजकरी के बीज, सफेद तिल प्रत्येक १०० ग्राम, कद्दूकस किया हुआ सूखा नारियल १५० ग्राम,

(शेष पृष्ठ ३२ पर)

एक बार के दर्शन से ही मेरा जीवन बदल गया

मुझे सन् १९६८ से पूज्य बापूजी के श्रीचरणों का सान्निध्य मिला और उनका प्रथम शिष्य होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है । अभी मेरी उम्र ९० साल है । डीसा में मेरा 'श्रीशंकर विलास' होटल था । मैं केवल अम्बा माता को ही मानता था और उनके दर्शन करने जाता था । पड़ोसी ने मुझे बापूजी का दर्शन करने साथ चलने को कहा । मैंने एक बार तो टाल दिया, दूसरी बार उसके साथ चल दिया ।

रास्ते में हमको दो भक्त मिले जो सत्संग सुन के लौट रहे थे । बोले : ''हम लोग आश्रम से आ रहे हैं । सत्संग पूरा हो गया है, बापूजी दर्शन देकर अंदर कुटिया में आराम करने जा चुके हैं । बापूजी ने कहा है कि तुमको रास्ते में दो भक्त मिलेंगे, उनसे कहना कि अभी आश्रम का द्वार बंद हो गया है ।''

पड़ोसी ने कहा : ''अब जाने से क्या लाभ ! कल चलेंगे ।'' मैंने कहा कि ''जिन महाराज को पहले से ही पता चल जाता है, ऐसे सिद्ध-महापुरुष के दर्शन तो अब जरूर करूँगा ।''

कुटिया पर पहुँचे तो दरवाजा बंद था । थोड़ी देर बाद बापूजी ने दरवाजा खोला तो उनके दिव्य तेजोमय रूप को देखकर मेरी नजरें झुक गयीं । चेहरे पर इतना आकर्षण, इतना तेज था कि मैं ज्यादा देर तक उनकी ओर देख न सका और चरणों में गिर पड़ा । खड़े-खड़े ही बापूजी ने सत्संग और प्रसाद दिया । घर आया तो पूरी रात बस बापू-ही-बापू दिखाई पड़े, करवट लूँ तो भी सामने बापूजी दिखाई दें । मैंने मन में सोचा, 'इन बापू ने मुझे क्या कर दिया !' एक बार के दर्शन से ही मेरा जीवन बदल गया, भक्ति का अंकुर फूट पड़ा । फिर तो आश्रम में दर्शन-सत्संग हेतु नियमित आने लगा ।

कई बार मन में ही सोचता था कि 'ये महात्मा भिक्षा माँगने के लिए बाहर आते नहीं हैं । प्रसाद में जो भी आता है सब बाँट देते हैं, आखिर खाते क्या हैं ?'

दो दिन के बाद बापूजी ने कुटिया में से आटे का बर्तन निकालकर दिखाते हुए कहा : ''क्या सोचता है ? आज के लिए इतना है, कल की क्या चिंता !'' मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ कि 'मैं मन में जो सोच रहा हूँ वह बापूजी को कैसे पता चल गया !' वेदांत क्या चीज है, गुरु क्या होते हैं - यह सब उस समय मुझे समझ में नहीं आता था । सत्संग सुनने से धीरे-धीरे पता चला । दीक्षा ले ली और वर्तमान में आश्रम में रहकर पूज्यश्री द्वारा चलाये जा रहे लोक-मांगल्यकारी सेवाकार्यों में सहभागी होकर अपना जीवन धन्य कर रहा हूँ ।

– शिवलाल पटेल, पुष्कर आश्रम

सफलता ऐसी कि सौ में से सौ

पूज्य बापूजी के श्रीचरणों में कोटि-कोटि नमन...

मैंने पूज्य बापूजी से २००४ में सारस्वत्य मंत्र तथा २००८ में गुरुमंत्र की दीक्षा ली थी । मैं प्रतिदिन नियम से मंत्रजप, ध्यान, पाठ करता हूँ । जिस तरह से पूज्य बापूजी ने सत्संग में बताया है उसी प्रकार से मैं सरस्वती माता व सद्गुरु भगवान का स्मरण कर तालू में जीभ लगा के आज्ञाचक्र में ध्यान करता हूँ और फिर तालू में जीभ लगा के ही पढ़ाई करता हूँ । परीक्षा के समय भी बापूजी के निर्देशानुसार पेपर लिखता हूँ ।

मैंने मार्च २०१० में दसवीं की परीक्षा दी थी और राज्य में प्रथम आने का संकल्प करके पूर्ण श्रद्धा एवं विश्वास से 'श्री आसारामायण' का अनुष्ठान किया था । पूज्य बापूजी की कृपा से मुझे दसवीं की परीक्षा में १०० प्रतिशत अंक मिले हैं और राज्य में सर्वप्रथम स्थान प्राप्त हुआ है । इसी प्रकार मुझे 'महाराष्ट्र प्रज्ञा शोधन परीक्षा' में राज्य-शिष्यवृत्ति प्राप्त हुई । इन सभी सफलताओं का श्रेय मेरे सद्गुरुदेव परम पूज्य बापूजी से प्राप्त हुई मंत्रदीक्षा एवं गुरुवर द्वारा बतायी गयी स्मृतिशक्ति व एकाग्रता विकसित करने की कुंजियों को ही जाता है । बापूजी मानव रूप में साक्षात् तारणहार ही हैं ।

– अमोल वाघ, देवपुर, धुलिया (महा.)

मो. : ०९४२१५३६७५६ ❑

आप कहते हैं...

यूँ तो रब की हर जगह बात होती है लेकिन
बापू के दरबार में रब से मुलाकात होती है।
हर जगह जात के, धर्म के, ईश के बखेड़े हैं,
बापू के दरबार में भक्तों की एक जात होती है।
हर कोई उससे रहमतों की भीख माँगता है
लेकिन बापू के दरबार में रहमतों की बरसात होती है॥

जिस तरह आग (अंगारे) के ढेर को कोई खा नहीं सकता, पृथ्वी को ऊँचा उठा नहीं सकता, सागर को कोई सुखा नहीं सकता, सूर्यदेव को फूँक मार के बुझा नहीं सकता, उसी तरह धर्म और बापू की ताकत को कोई दबा नहीं सकता, कोई मिटा नहीं सकता।

हर पर्वत पर मणि माणिक नहीं होते,
हर हाथी के माथे पे मुक्तामणि नहीं होती।
हर जंगल में चंदन के पेड़ नहीं होते,
और हर देश में बापू जैसे गुरुदेव नहीं होते।

आकाश की कोई सीमा नहीं, पृथ्वी का कोई तोल नहीं, साधु की कोई जात नहीं और बापूजी का कोई तोल नहीं, कोई मोल नहीं। संत के सान्निध्य में सब कुछ मिलता है, संत के चरणों से बड़ी तीर्थस्थली इस दुनिया में कोई नहीं है। इस पण्डाल में आकर आज सिद्धू ऐसा महसूस कर रहा है जैसे नर्मदा में बहता-बहता कोई तिनका किसी शिवलिंग के ऊपर टिक जाय। इसलिए आज मैं धन्य हुआ। पुनः शीश झुकाकर बापूजी के चरणों में निवेदन करता हूँ कि

अगर अपनी तरफ देखूँ तो कुछ नहीं पल्ले।
बापू की रहमत देखूँ तो सिद्धू की बल्ले-बल्ले॥

– नवजोत सिंह सिद्धू
सांसद व जाने-माने क्रिकेट खिलाड़ी

***

यह शहीदों की, देशभक्तों की, भारत की महान धरती है। आप सरीखे संत आते हैं तो हम सबका मार्ग और भी प्रशस्त हो जाता है। मैंने तो इतना ही पढ़ा है कि

संत न होते जगत में, तो जल मरता संसार।

संत का अवतार ही दूसरों को छाया, सुख-शांति देने के लिए है। लोक के साथ परलोक का भी रास्ता सही बन जाय यह सिखाने के लिए है।

पंजाब के लोग भ्रूणहत्या एवं नशा बहुत ज्यादा करने लगे हैं। आपसे करबद्ध प्रार्थना है कि ऐसा आशीर्वाद दे जाइये जिससे ऐसे लोगों को ईश्वर सद्बुद्धि दें। आप पुनः-पुनः पधारते रहिये। अंत में इतना ही कहूँगी :

कबिरा संगत साध की, जो गंधी की वास।
जो गंधी कछु दे नहीं, तो भी वास-सुवास॥

– लक्ष्मीकांता चावला
सामाजिक सुरक्षा एवं बाल विकास मंत्री
(पंजाब सरकार)

(पृष्ठ ३० से 'शीत ऋतु विशेष' का शेष)

शुद्ध घी ३०० ग्राम और बबूल का गोंद १०० ग्राम, मिश्री १.५ किलो।

विधि : थोड़े-से घी में गोंद को तलकर रखें। सभी औषधियों को कूट-पीसकर चूर्ण बना के शेष बचे घी में भून लें। फिर मेवे व गोंद को कूटकर और तिलों को अलग से सेंक के इसमें डाल दें। खूब हिलायें-चलायें। फिर नीचे उतारकर नारियल मिलायें। अब मिश्री की ३ तार की चाशनी बनाकर इस मिश्रण को मिला दें। थोड़ा ठण्डा होने पर थाली में फैलाकर छोटे-छोटे टुकड़ों में काटकर रखें।

सेवन-विधि : २० ग्राम पाक सुबह-शाम दूध के साथ लें। (उम्र व पाचनशक्ति के अनुसार पाक कम या अधिक मात्रा में ले सकते हैं।)

इस पाक को स्वयं बना लें अथवा आश्रम के वैद्यों-डॉक्टरों से सम्पर्क करें।

संस्था समाचार

('ऋषि प्रसाद' प्रतिनिधि)

प्रतिवर्ष की भाँति इस वर्ष भी पावन कार्तिक मास में देव-दिवाली के अवसर पर **बड़ौदा** में **६ से १० नवम्बर (सुबह)** तक पूनम-दर्शन, सत्संग एवं विद्यार्थी तेजस्वी तालीम शिविर का आयोजन हुआ, जिसमें जहाँ एक ओर हजारों विद्यार्थियों ने जीवन के सर्वांगीण विकास की कुंजियाँ प्राप्त कीं वहीं देश के कोने-कोने से पहुँचे साधकों और पूनम व्रतधारियों ने भगवत्स्वरूप गुरुदेव के सान्निध्य में साधना के नये सोपान तय किये। देवउठी एकादशी को कपूर के लाखों दीपकों से पण्डाल जगमगा उठा। श्रद्धालुओं ने आरती कर अकाल मृत्यु से सुरक्षा के शास्त्रीय विधान का लाभ उठाया। परमात्मा के मंगलमय विधान की दार्शनिक व्याख्या करते हुए पूज्य बापूजी ने कहा : ''वह प्यारा (परमेश्वर) तुम्हें अनुकूलता देकर उत्साहित, आह्लादित और आनंदित करता है। प्रतिकूलता देकर तुम्हें विवेकी, वैराग्यवान बनाता है। वह मित्र देकर तुम्हें अपने परम मित्र की प्रीति का रसास्वादन करने को उत्साहित करता है। विघ्न-बाधा, शत्रु देकर तुम्हारी अहंता और आसक्ति मिटाकर अपनी ओर बुलाना चाहता है। उसकी हर चेष्टा में तुम्हारा मंगल छुपा है। तुम खामखाह अपनी पकड़ से बोलते हो कि 'हाय ! हाय !! मेरा दुर्भाग्य है कि दुःख आया।' सुख तो तुम्हें विषय-विकारों में उलझाकर खोखला बनाता है, जबकि दुःख तुम्हें विवेकी, निर्मोही, निरहंकारी बनाकर भगवान की तरफ ले जाता है।''

गुड़गाँव में **१० (दोप.) व ११ नवम्बर** को पूनम-दर्शन कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। उत्तर भारत के श्रद्धालुओं को बड़ौदा आने-जाने में यात्रा-कष्ट व खर्च न हो इस हेतु बापूजी ने करुणा-कृपा करके यहाँ पूनम-दर्शन प्रदान किया। गुड़गाँव की जनता को पूज्यश्री ने सिखाये सफल, सुखी व सम्मानित जीवन के गुर। छुट्टी का दिन न होने के बावजूद भी लाखों की संख्या में श्रद्धालुओं ने दो दिन तक सत्संग-अमृत का पान किया। ईश्वरप्राप्ति के लिए बुद्धि की तीक्ष्णता की जगह बुद्धि की पवित्रता का विशेष महत्त्व बताते हुए पूज्य बापूजी ने कहा : ''तीक्ष्ण बुद्धि और पवित्र बुद्धि में फर्क समझ लेना। जब ईश्वर को चाहते हो तो आपकी बुद्धि पवित्र होती है। ईश्वर के बिना सुखी होना चाहते हैं तो आपकी बुद्धि केवल तीक्ष्ण हो सकती है। आप बुद्धिजीवी हो सकते हैं, बुद्धियोगी नहीं। तीक्ष्ण बुद्धि की जहाँ जरूरत पड़ती है, वहाँ बुद्धिजीवी लोग सफल होते हैं लेकिन केवल तीक्ष्ण बुद्धि से ईश्वर नहीं मिलता। तीक्ष्ण बुद्धि के साथ पवित्र बुद्धि हो तो ईश्वर मिल जायेगा। तीक्ष्ण बुद्धि है और शराब-कबाब खाते-पीते रहे या ईश्वर को नहीं चाहते हो तो जीवन व्यर्थ है। तीक्ष्ण बुद्धि हो और ईश्वर को चाहते हो तो वह तो सोने पे सुहागा है।''

गुरु की नगरी कहे जानेवाले **अमृतसर** में **१२ व १३ नवम्बर** को आयोजित हुए सत्संग में सद्गुरु बापूजी का दर्शन व सान्निध्य पाकर साधकों की खुशी का पारावार न रहा। यहाँ पर आयोजित दो दिवसीय सत्संग में बापूजी ने अपनी ज्ञानामृत-वर्षा के दौरान पारिवारिक व सामाजिक जीवन में सफलता के सरल उपाय बताये तथा हिन्दू-सिख एकता का संदेश दिया। इस सत्संग-कार्यक्रम में जाने-माने क्रिकेट खिलाड़ी व सांसद नवजोत सिंह सिद्धू अपने सद्गुरुदेव पूज्य बापूजी का स्वागत करने व आशीर्वाद लेने हेतु दौड़े-दौड़े आये। पंजाब सरकार की सामाजिक सुरक्षा एवं बाल विकास मंत्री लक्ष्मीकांता चावला ने भी पूज्यश्री के दर्शन-सत्संग का लाभ लिया। (वक्तव्य पृष्ठ ३२ पर) पूज्य बापूजी ने कहा : ''भगवान के हजार-हजार नामों (श्री विष्णुसहस्रनाम आदि)

में एक-एक नाम के पीछे उसका अर्थ, रहस्य, प्रभाव है। जैसे आपके मोबाइल में १० आँकड़े हैं लेकिन इन आँकड़ों को घुमा-फिरा के आप लाखों जगह बात कर सकते हैं। जब १० आँकड़ों से लाखों जगह बात कर सकते हो तो हजार नामों द्वारा आप सृष्टि के किसी ब्रह्माण्ड के किसी भी हिस्से में रब की रहमत पा सकते हो। मंत्र-विज्ञान की ऐसी ताकत है।''

रेलकोच फैक्ट्री के नाम से मशहूर शहर **कपूरथला (पंजाब)** में **२० नवम्बर** को पूज्य बापूजी का एक दिवसीय सत्संग-कार्यक्रम सम्पन्न हुआ, जिसमें बापूजी ने श्रद्धालुओं को सहज, सुलभ परमात्मप्राप्ति के साधन बताये व उनके भावों को स्वीकार कर पंजाबी पगड़ी भी धारण की। इन सभी कार्यक्रमों का आकर्षण-केन्द्र रही सत्संग-पण्डाल के बीच चलती हुई रेलगाड़ी, जिससे सत्संग-पण्डाल में लाखों श्रद्धालुओं को पूज्य बापूजी के दर्शन सहज ही सुलभ हुए।

अखिल भारतीय 'ऋषि प्रसाद' सेवादार सम्मेलन-२०१२

सप्रेम आमंत्रण

सेवादार पुण्यात्माओ !

प्रतिवर्ष की तरह इस वर्ष भी उत्तरायण पर्व के पावन अवसर पर 'ऋषि प्रसाद' के सेवादारों का अखिल भारतीय स्तर पर वार्षिक सम्मेलन अहमदाबाद आश्रम में आयोजित किया गया है। वर्ष भर 'ऋषि प्रसाद' की सेवा में रत रहनेवाले सेवादारों हेतु यह एक दुर्लभ अवसर होगा, जिसमें 'ध्यान योग शिविर' के साथ-साथ सेवा से संबंधित विशेष सभाओं का आयोजन भी किया जायेगा। सभी सेवादार इस अनुपम अवसर का लाभ लें।

सम्मेलन का प्रवेश-पास 'ऋषि प्रसाद' के क्षेत्रीय कार्यालय से प्राप्त कर सकते हैं।

- ऋषि प्रसाद कार्यालय, अहमदाबाद।

विश्वमानव के लिए पूज्य बापूजी का प्रसादस्वरूप

मातृ-पितृ पूजन दिवस

१४ फरवरी को मनाये जानेवाले 'वेलेन्टाईन डे' की कुप्रथा से समाज के भावी कर्णधारों की रीढ़ कमजोर होती देख दूरद्रष्टा लोकसंत श्री आशारामजी बापू का हृदय द्रवीभूत हुआ। विश्व-मांगल्य के उद्देश्य से आपने एक ऐसे पावन पर्व की नींव रखी, जिसका नाम है **'मातृ-पितृ पूजन दिवस'**। इन विश्वात्मा संत द्वारा आरम्भ किये गये इस महायज्ञ में प्रत्येक साधक, सज्जन निम्न में से कम-से-कम एक संकल्प लेकर अपनी आहुति अवश्य अर्पित करे।

(१) अपने क्षेत्र के विद्यालय-महाविद्यालयों के प्राचार्यों से मिलूँगा और उन्हें १४ फरवरी को 'मातृ-पितृ पूजन दिवस' मनाने के लिए प्रेरित करूँगा। अनुमति मिलने पर वहाँ पुस्तक-अनुसार पूजन-विधि करवाऊँगा।

(२) आसपास के २५-५० बच्चों व उनके माता-पिता को एकत्र कर यह दिवस मना के संस्कार-सुवास महकाऊँगा।

(३) अपनी क्षमतानुसार अड़ोस-पड़ोस या विद्यालय में 'मातृ-पितृ पूजन' पुस्तक बाँटूँगा।

पूज्य बापूजी कहते हैं : ''वेलेन्टाईन डे मनाने की अपेक्षा **'मातृ-पितृ पूजन दिवस'** मनायें। इसकी पुस्तक पढ़ें और अड़ोस-पड़ोस के बच्चों में भी अपने माँ-बाप के प्रति सद्भाव भरने के भगीरथ कार्य में आप भी थोड़ा समय निकाल लें, जिससे आपके और पड़ोस के बच्चे पाश्चात्य गंदगी से बचकर भारतीय ऋषि-परम्परा का प्रसाद पायें और दूसरों तक पहुँचायें।''

कम-से-कम १००० पुस्तक लेने पर आप उन पर सौजन्य के रूप में अपनी फर्म आदि का नाम भी छपवा सकते हैं।

सम्पर्क : बाल संस्कार विभाग,
संत श्री आशारामजी आश्रम, अहमदाबाद
दूरभाष : ०७९-३९८७७७४९.

आश्रम द्वारा संचालित समाजोत्थान के विविध सेवाकार्य

चंडीगढ़ में गर्म भोजन के डिब्बों व कम्बलों का वितरण तथा जयपटना (ओड़िशा) के गरीबों में भण्डारा।

गोंदिया (महा.) में कपड़े, नकद दक्षिणा व मिठाई वितरण तथा डेहरी, जि. धार (म.प्र.) में भोजन-प्रसाद वितरण।

कल्याण, जि. थाने (महा.) के गरीब बच्चों में कपड़े वितरण तथा बेलौदी, जि. दुर्ग (छ.ग.) में कपड़े व मिठाई वितरण।
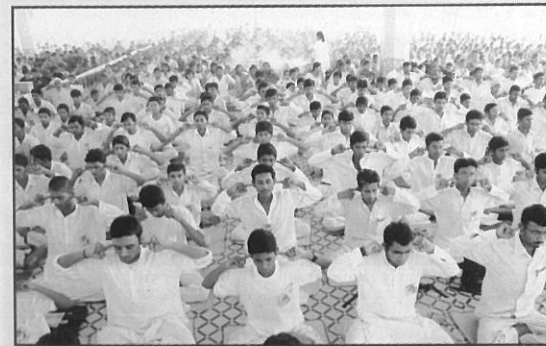
पूज्य बापूजी के सान्निध्य में अहमदाबाद आश्रम में हुए सात दिवसीय 'सारस्वत्य मंत्र अनुष्ठान' की झलकियाँ।

स्थानाभाव के कारण यहाँ कुछ ही अंश दिखा पा रहे हैं, अन्य अनेक स्थानों की तस्वीरों हेतु आश्रम की वेबसाइट www.ashram.org देखें।

पूज्य बापूजी के सत्संग में उमड़ा जनसागर
RNP. No. GAMC 1132/2009-11
(Issued by SSPOs Ahd, valid upto 31-12-2011)
WPP LIC No. CPMG/GJ/41/09-11
(Issued by CPMG GUJ. valid upto 31-12-2011)
RNI No. 48873/91
DL (C)-01/1130/2009-11
WPP LIC No. U (C)-232/2009-11
MH/MR-NW-57/2009-11
'D' No. MR/TECH/47.4/2011
बड़ौदा (गुज.)
गुड़गाँव (हरि.)
अमृतसर (पंजाब)
Posting at PSO Ahmedabad between 1st to 17th of every month. ❋ Posting at ND PSO on 5th & 6th of E.M. ❋ Posting at MBI Patrika Channel on 9th & 10th of E.M.
नूतन वर्ष कैलेण्डर-सेवा अभियान
(नूतन वर्ष के अवसर पर सुमधुर, सुंदर, सत्प्रेरणा देनेवाले कैलेण्डर बहुतों तक पहुँचाने का शुभ संकल्प)
गुरु की सेवा साधु जाने, गुरु सेवा कहाँ मूढ पिछानै।
पूज्य बापूजी के सत्प्रेरणा व शांतिप्रदायक एवं चित्ताकर्षक श्रीचित्रों तथा अनमोल आशीर्वचनों से सुसज्जित वर्ष २०१२ के वॉल कैलेण्डर, पॉकेट कैलेण्डर, टेबल कैलेण्डर व दैनंदिनी (डायरी) उपलब्ध हैं।
सभी साधक भाई-बहन अपने परिचितों में नये वर्ष के कम-से-कम २५-५० कैलेण्डर अवश्य बाँटें तथा अपने साधक व्यापारी मित्रों से भी कम-से-कम २५० से १००० तक कैलेण्डर खरीदवायें। उनका नाम कैलेण्डरों पर छापा जायेगा।
२०१२
मधुर मधुर नाम हरि हरि ॐ...
पावन पावन नाम हरि हरि ॐ...